आचार्य कुन्दकुन्द-रचित

नियमसार

(खण्ड-1)

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित
नियमसार
(खण्ड-1)

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन
डॉ. कमलचन्द सोगाणी
निदेशक
जैनविद्या संस्थान-अपभ्रंश साहित्य अकादमी

अनुवादक
श्रीमती शकुन्तला जैन
सहायक निदेशक
अपभ्रंश साहित्य अकादमी

प्रकाशक
अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी
राजस्थान

◈ प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

श्री महावीरजी - 322 220 (राजस्थान)

दूरभाष - 07469-224323

◈ प्राप्ति-स्थान

1. साहित्य विक्रय केन्द्र, श्री महावीरजी

2. साहित्य विक्रय केन्द्र

दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी

सवाई रामसिंह रोड, जयपुर - 302 004

दूरभाष - 0141-2385247

◈ प्रथम संस्करण : मार्च, 2015

◈ सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

◈ मूल्य -350 रुपये

◈ ISBN 978-81-926468-5-5

◈ पृष्ठ संयोजन

फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स

जौहरी बाजार, जयपुर - 302 003

दूरभाष - 0141-2562288

◈ मुद्रक

जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि.

एम.आई. रोड, जयपुर - 302 001

अनुक्रमणिका

क्र.सं. संख्या	विषय	पृष्ठ
	प्रकाशकीय	V
1.	ग्रंथ एवं ग्रंथकारः सम्पादक की कलम से	1
2.	संकेत सूची	8
3.	जीव-अधिकार	10
4.	अजीव-अधिकार	30
5.	शुद्धभाव-अधिकार	49
6.	व्यवहारचारित्र-अधिकार	68
7.	मूल पाठ	90
8.	परिशिष्ट-1	
	(i) संज्ञा-कोश	100
	(ii) क्रिया-कोश	115
	(iii) कृदन्त-कोश	117
	(iv) विशेषण-कोश	120
	(v) सर्वनाम-कोश	128
	(vi) अव्यय-कोश	129
	परिशिष्ट-2	
	छंद	132
	परिशिष्ट-3	
	सहायक पुस्तकें एवं कोश	137

प्रकाशकीय

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित **'नियमसार (खण्ड-1)'** हिन्दी-अनुवाद सहित पाठकों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है।

आचार्य कुन्दकुन्द का समय प्रथम शताब्दी ई. माना जाता है। वे दक्षिण के कोण्डकुन्द नगर के निवासी थे और उनका नाम कोण्डकुन्द था जो वर्तमान में कुन्दकुन्द के नाम से जाना जाता है। जैन साहित्य के इतिहास में आचार्य श्री का नाम आज भी मंगलमय माना जाता है। इनकी समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार, रयणसार, अष्टपाहुड, दशभक्ति, बारस अणुवेक्खा कृतियाँ प्राप्त होती है।

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित उपर्युक्त कृतियों में से **'नियमसार'** जैनधर्म-दर्शन को प्रस्तुत करनेवाली शौरसेनी भाषा में रचित एक रचना है। इस ग्रन्थ में कुल 187 गाथाएँ हैं जिनमें से खण्ड-1 में 1 से 76 तक की गाथाएँ ली गई हैं।

इसमें निश्चय और व्यवहार दृष्टि से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का निरूपण किया गया है। इसके साथ ही जीव द्रव्य, पुद्गल द्रव्य, धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य तथा काल द्रव्य का भी वर्णन किया गया है। पुद्गल द्रव्य को विशेष रूप से समझाया गया है।

'नियमसार' का हिन्दी अनुवाद अत्यन्त सहज, सुबोध एवं नवीन शैली में किया गया है जो पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी होगा। इसमें गाथाओं के शब्दों का अर्थ व अन्वय दिया गया है। इसके पश्चात संज्ञा-कोश, क्रिया-

कोश, कृदन्त-कोश, विशेषण-कोश, सर्वनाम-कोश, अव्यय-कोश दिया गया है। पाठक **'नियमसार'** के माध्यम से शौरसेनी प्राकृत भाषा व जैनधर्म-दर्शन का समुचित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

प्रस्तुत कृति का **खण्ड-1** प्रकाशित किया जा रहा है। जैन दार्शनिक साहित्य को आसानी से समझने और प्राकृत-अपभ्रंश की पाण्डुलिपियों के सम्पादन में नियमसार का विषय सहायक होगा। श्रीमती शकुन्तला जैन, एम.फिल. ने बड़े परिश्रम से प्राकृत-अपभ्रंश भाषा सीखने-समझने के इच्छुक अध्ययनार्थियों के लिए **'नियमसार (खण्ड-1)'** का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। अतः वे हमारी बधाई की पात्र हैं।

पुस्तक-प्रकाशन के लिए अपभ्रंश साहित्य अकादमी के विद्वानों विशेषतया श्रीमती शकुन्तला जैन के आभारी हैं जिन्होंने **'नियमसार(खण्ड-1)'**का हिन्दी-अनुवाद करके जैनदर्शन व शौरसेनी प्राकृत के पठन-पाठन को सुगम बनाने का प्रयास किया है। पृष्ठ संयोजन के लिए फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स एवं मुद्रण के लिए जयपुर प्रिण्टर्स धन्यवादार्ह है।

न्यायाधिपति नरेन्द्र मोहन कासलीवाल
अध्यक्ष

महेन्द्र कुमार पाटनी
मंत्री

प्रबन्धकारिणी कमेटी
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

डॉ. कमलचन्द सोगाणी
संयोजक
जैनविद्या संस्थान समिति
जयपुर

वीर निर्वाण संवत्-2541

09.03.2015

ग्रन्थ एवं ग्रंथकार

संपादक की कलम से

आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित नियमसार एक अनूठी एवं अपूर्व रचना है। जो भी साधक मोक्ष-मार्ग के पथिक हैं, उनके लिए यह रचना अपरिहार्य है। मोक्ष-मार्ग पर चलने के लिए जो नियम आवश्यकरूप से पाला जाना चाहिए वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्‌चारित्र- नियम कहा जाता है। यह नियम दुखों को हटानेवाला और अनन्त सुख देनेवाला होने के कारण पूर्णरूप से प्रयुक्त नियम है, इसलिए सिद्ध है, सार है।

आचार्य दो दृष्टियों से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्‌चारित्र की व्याख्या करते हैं-

(1) बाह्यदृष्टि या लोकदृष्टि या परदृष्टि से- यह व्यवहारदृष्टि है।

(2) अन्तरदृष्टि या आत्मदृष्टि या स्वदृष्टि से- यह निश्चयदृष्टि है।

सम्यग्दर्शनः

बाह्यदृष्टि या लोकदृष्टि या परदृष्टि या व्यवहारदृष्टि से आप्त, आगम और द्रव्यों में श्रद्धा सम्यग्दर्शन है। जिसके द्वारा समस्त दोष नष्ट कर दिये गये हैं, जो समस्त गुणों से युक्त है वह आप्त होता है (5)। जो केवलज्ञान आदि परम वैभव से युक्त होता है, वह तीर्थंकर (आप्त) कहा जाता है (6, 7)।

आप्त के मुख से निकला हुआ वचन जो पूर्वापर दोषों से मुक्त है, वह आगम कहा गया है। उस आगम के द्वारा कहे गये द्रव्य होते हैं (8)।

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश और काल जो नाना-प्रकार की गुण-पर्यायों से युक्त हैं, वे द्रव्य कहे गये हैं (9)।

अन्तरदृष्टि या आत्मदृष्टि या स्वदृष्टि या निश्चयदृष्टि से विभावरहित आत्मा का श्रद्धान ही सम्यक्त्व होता है (50, 51)। दूसरे शब्दों में क्षोभ, दोष व अदृढ़तारहित आत्मा का श्रद्धान ही सम्यक्त्व है (52)। इस प्रकार के श्रद्धान की उत्पत्ति के विषय में कहा गया है कि सम्यक्त्व का (बाह्य) निमित्त जिनसूत्र होता है तथा उस जिनसूत्र को समझनेवाले मनुष्य भी बाह्य निमित्त कहे गये हैं किन्तु दर्शनमोह (दर्शनमोहनीय कर्म) का क्षय आदि अंतरंगनिमित्त कहा गया है (53)।

सम्यग्ज्ञानः

सम्यग्दर्शन के समान सम्यग्ज्ञान भी दो प्रकार से समझाया गया है।

बाह्यदृष्टि या लोकदृष्टि या परदृष्टि या व्यवहारदृष्टि से संशय (सन्देह), विमोह (अस्पष्टता) और विभ्रम (विपरीतग्रहण) रहित ज्ञान सम्यग्ज्ञान होता है (52)।

अन्तरदृष्टि या आत्मदृष्टि या स्वदृष्टि या निश्चयदृष्टि से हेय और उपादेय तत्त्वों का ठीक-ठीक बोध सम्यग्ज्ञान है (52)। लोक के घटक जीवादि द्रव्य हैं, जो बाह्य/पर द्रव्य है, इसलिए वे हेय कहे जाते हैं। किन्तु कर्मों के संयोग से उत्पन्न विभाव गुण-पर्यायों-रहित निज की आत्मा ही उपादेय है (38)। और भी कहा है: परद्रव्य त्यागने योग्य है, स्वद्रव्य उपादेय है। आत्मा अंतर (स्व) द्रव्य है इसलिए अंतर स्वद्रव्य आत्मा ही उपादेय है (50)। उपादेय आत्मा का स्वरूप बताते हुए कहा गया है कि जिस तरह सिद्ध आत्माएँ हैं उसी तरह से द्रव्यदृष्टि से संसारी जीव होते हैं (47)। फिर उपादेय आत्मा मन-वचन-काय के स्पंदनरहित, विरोधी, विकल्परहित, पर से तादात्म्यरहित, शरीररहित, पराश्रयरहित, शुभ-अशुभ रागरहित, दोष (कर्ममल)/द्वेष (वैर) रहित, मूर्च्छा/अविवेकरहित और भयरहित होता है (43)। कहा गया है कि उपादेय आत्मा में विभाव पर्यायें नहीं होती। वहाँ मान-अपमान की भाव दशाएँ, हर्ष की भाव दशाएँ और खेद की भाव दशाएँ नहीं होती है (39)।

ज्ञान की धारणा को समझाने के लिए आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है: ज्ञान दो प्रकार का होता है (1) स्वभावज्ञान और (2) विभावज्ञान। स्वभावज्ञान असीमित ज्ञान है तथा विभावज्ञान असीमित ज्ञान से भिन्न हुआ सीमित ज्ञान है यह विभावज्ञान (असीमित से भिन्न ज्ञान) दो प्रकार का होता है: सम्यग्ज्ञान तथा मिथ्याज्ञान। सम्यग्ज्ञान आत्मा को उपादेय माननेवाला ज्ञान है जो चार प्रकार का होता है (1) मति (2) श्रुत (3) अवधि और (4) मनःपर्यय। मिथ्याज्ञान आत्मा को उपादेय स्वीकार नहीं करनेवाला ज्ञान है जो तीन प्रकार का है (1) कुमति (2) कुश्रुत और (3) कुअवधि।

सम्यक्चारित्रः

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की तरह आचार्य कुन्दकुन्द ने सम्यक्चारित्र को भी दो तरीके से समझाया है। (1) जो बाह्यदृष्टि या लोकदृष्टि या परदृष्टि से हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह का त्याग करता है, पाँच समिति (ईया, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण और प्रतिष्ठापन) तथा तीन गुप्ति (मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति) का सूक्ष्मरूप से पालन करता है वह आत्मा की उपादेयता को समझकर बहिर्मुखी साधना में संलग्न होता है वह व्यवहार से सम्यक्चारित्र का पालन करनेवाला होता है और (2) जो आत्मा की उपादेयता को समझकर अन्तरदृष्टि या आत्मदृष्टि या स्वदृष्टि से ध्यान, सामायिक आदि के द्वारा अन्तर्मुखी होकर साधना में संलग्न होता है वह निश्चय सम्यक्चारित्र में लीन कहा जाता है।

नियमसार में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का मुख्यतया वर्णन करते हुए द्रव्यों का वर्णन भी किया गया है।

जीवद्रव्यः

जीव द्रव्य चेतना गुणवाला होता है और शेष द्रव्य चेतना-गुण से रहित होते हैं (37)। जीव द्रव्य रसरहित, रूपरहित, गंधरहित, शब्दरहित, स्पर्श से अप्रकट, तर्क से ग्रहण न होनेवाला तथा न कहे हुए आकार वाला होता है (47)।

जिस प्रकार लोक के अग्रभाग में स्थित सिद्ध अशरीरी, अविनाशी, अतीन्द्रिय, निर्मल और विशुद्धात्मा होते हैं उसी प्रकार संसार चक्र में भ्रमण करते हुए द्रव्यदृष्टि से जीव अशरीरी, अविनाशी, अतीन्द्रिय, निर्मल और विशुद्धात्मा होते हैं (48)।

जीव उपयोगमय होता है। उपयोग दो प्रकार का होता है: (1) ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग। ज्ञानोपयोग दो प्रकार का होता है: स्वभावज्ञान (असीमित ज्ञान) और विभावज्ञान (सीमित ज्ञान) (10)। केवलज्ञान इन्द्रियों से रहित तथा सहायता निरपेक्ष होता है इसलिए वह स्वभावज्ञान (असीमित ज्ञान) कहा जाता है। विभाव ज्ञान (सीमित ज्ञान) दो प्रकार का होता है: सम्यग्ज्ञान और मिथ्याज्ञान। सम्यग्ज्ञान चार प्रकार का होता है: (1) मतिज्ञान (2) श्रुतज्ञान (3) अवधिज्ञान और (4) मनःपर्ययज्ञान। मिथ्याज्ञान तीन प्रकार का होता है: (1) कुमतिज्ञान (2) कुश्रुतज्ञान और (3) कुअवधिज्ञान (11, 12)।

दर्शनोपयोग दो प्रकार का होता है: स्वभावदर्शन और विभावदर्शन। केवलदर्शन इन्द्रियों से रहित और असहाय होता है इसलिए वह स्वभावदर्शन कहा गया है। चक्षु, अचक्षु और अवधि दर्शन; ये तीनों ही विभावदर्शन कहे गये हैं (13, 14)।

व्यवहारनय (लोकदृष्टि) से संसारी आत्मा पुद्गल कर्मों का कर्ता और भोक्ता होता है और निश्चयनय (आत्मदृष्टि) से आत्मा कर्म से उत्पन्न भाव के कारण रागद्वेषात्मक भावों का कर्ता और भोक्ता होता है (18)। जीवों को दो प्रकार से जाना जाता है: द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय। द्रव्यार्थिकनय से जीव विभाव पर्यायों से रहित होते हैं तथा पर्यायार्थिकनय से जीव विभाव पर्यायों से सहित होते हैं (19)।

पुद्गलद्रव्य:

जो द्रव्य अपना आदि है, अपना मध्य है, अपना अन्त है, इन्द्रियों द्वारा ग्रहण करने योग्य नहीं है तथा जो अविभागी है वह पुद्गल परमाणु कहा जाता है

(26)। चरपरा, कड़वा, कसायला, खट्टा और मीठा-इन पाँच रसों में से एक रस, सफेद, पीला, हरा, लाल और काला-इन पाँच वर्णों में से कोई एक वर्ण, सुगंध और दुर्गंध में से कोई एक गंध तथा कड़ा-नरम, हल्का-भारी, ठंडा-गरम और रूखा-चिकना-इन आठ स्पर्शों में से अविरुद्ध दो स्पर्श-होते हैं, वह पुद्गल स्वभाव गुणवाला होता है (27)। परमाणुरूप पर्याय पुद्गल की शुद्ध पर्याय है। शुद्ध पर्याय होने से वह शब्द-रहित है। इस तरह निश्चयनय (मूलदृष्टि) से परमाणु पुद्गलद्रव्य कहा जाता है और इससे भिन्न (व्यवहार-लोकदृष्टि से) स्कंध का नाम पुद्गलद्रव्य है (29)।

पुद्गलद्रव्य दो प्रकार का होता है: (1) परमाणु और (2) स्कंध।

परमाणु दो प्रकार का होता है: (1) कार्य परमाणु और(2) कारण परमाणु (20)। चार धातुओं (पृथ्वी, जल, तेज और वायु) का जो आधार होता है वह कारण परमाणु कहलाता है तथा जो स्कन्धों का अंतिम भाग होता है वह कार्य परमाणु कहलाता है (25)।

स्कंध छ प्रकार के होते हैं: (1) अति स्थूलस्थूल (2) स्थूल (3) स्थूलसूक्ष्म (4) सूक्ष्मस्थूल (5) सूक्ष्म और (6) अति सूक्ष्म (20, 21)।

(1) अति स्थूलस्थूल स्कंध: भूमि, पर्वत आदि।

(2) स्थूल स्कन्ध: घी, जल, तेल आदि।

(3) स्थूलसूक्ष्म स्कन्ध: छाया, आतप आदि।

(4) सूक्ष्मस्थूल स्कन्ध: चार इन्द्रियों (स्पर्शन,रसना,घ्राण और चक्षु) के विषय कहे गये हैं।

(5) सूक्ष्म स्कन्ध: कर्मवर्गणा के योग्य स्कन्ध सूक्ष्म होते हैं।

(6) अतिसूक्ष्म स्कन्ध: कर्मवर्गणा के अयोग्य स्कन्ध सूक्ष्म होते हैं (22, 23, 24)।

धर्मद्रव्यः

जीव और पुद्गलों की गति में जो निमित्त होता है वह धर्मद्रव्य कहा जाता है (30)।

अधर्मद्रव्यः

जीव और पुद्गलों के ठहरने में जो निमित्त होता है वह अधर्मद्रव्य कहा जाता है (30)।

आकाशद्रव्यः

जीव आदि सभी द्रव्यों के अवगाहन (स्थान देने) में जो निमित्त होता है; वह आकाशद्रव्य कहा जाता है (30)।

कालद्रव्यः

जीव आदि द्रव्यों के परिणमन में जो कारण होता है वह कालद्रव्य कहा जाता है (33)। जीव और पुद्गलद्रव्य से अनन्त गुणी समयपर्यायरूपी संपदा लोकाकाश में होती है और उसका आधार परमार्थ काल होता है (32)। जीवादि द्रव्यों में परिणमन का कारण कालद्रव्य होता है (33)।

अस्तिकायः

काल द्रव्य को छोड़कर ये पाँच (जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश) द्रव्य अस्तिकाय कहे गये हैं। बहुप्रदेशता को काय कहा गया है (34)। जीव द्रव्य के असंख्यात प्रदेश होते हैं। मूर्त (पुद्गल द्रव्य) के संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश होते हैं। धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य तथा लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश होते हैं। अलोकाकाश के अनन्त प्रदेश होते हैं। काल द्रव्य का एक प्रदेश होता है क्योंकि काल द्रव्य के कायत्व नहीं होता है (35, 36)।

डॉ. कमलचन्द सोगाणी
पूर्व प्रोफेसर दर्शनशास्त्र, दर्शनशास्त्र विभाग
सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
एवं निदेशक
जैनविद्या संस्थान/अपभ्रंश साहित्य अकादमी

नियमसार को अच्छी तरह समझने के लिए गाथा के प्रत्येक शब्द जैसे- संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, कृदन्त आदि के लिए व्याकरणिक विश्लेषण में प्रयुक्त संकेतों का ज्ञान होने से प्रत्येक शब्द का अनुवाद समझा जा सकेगा।

अ – अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

अक - अकर्मक क्रिया

अनि - अनियमित

कर्म - कर्मवाच्य

नपुं. - नपुंसकलिंग

पु. - पुल्लिंग

भवि - भविष्यत्काल

भूकृ - भूतकालिक कृदन्त

व - वर्तमानकाल

वकृ - वर्तमान कृदन्त

वि - विशेषण

विधि - विधि

विधिकृ - विधि कृदन्त

संकृ - संबंधक कृदन्त

सक - सकर्मक क्रिया

सवि - सर्वनाम विशेषण

स्त्री. - स्त्रीलिंग

हेकृ - हेत्वर्थक कृदन्त

•()- इस प्रकार के कोष्ठक में मूल शब्द रखा गया है।

•[()+()+().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न शब्दों में संधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठकों में गाथा के शब्द ही रख दिये गये हैं।

•[()-()-().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '-' चिह्न समास का द्योतक है।

•{[()+()+().....]वि} जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

•जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल संख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द '**संज्ञा**' है।

•जहाँ **कर्मवाच्य, कृदन्त** आदि प्राकृत के नियमानुसार नहीं बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर '**अनि**' भी लिखा गया है।

क्रिया-रूप निम्नप्रकार लिखा गया है-

1/1 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/एकवचन
1/2 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/बहुवचन
2/1 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/एकवचन
2/2 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/बहुवचन
3/1 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/एकवचन
3/2 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/बहुवचन

विभक्तियाँ निम्नप्रकार लिखी गई हैं–

1/1 - प्रथमा/एकवचन

1/2 - प्रथमा/बहुवचन

2/1 - द्वितीया/एकवचन

2/2 - द्वितीया/बहुवचन

3/1 - तृतीया/एकवचन

3/2 - तृतीया/बहुवचन

4/1 - चतुर्थी/एकवचन

4/2 - चतुर्थी/बहुवचन

5/1 - पंचमी/एकवचन

5/2 - पंचमी/बहुवचन

6/1 - षष्ठी/एकवचन

6/2 - षष्ठी/बहुवचन

7/1 - सप्तमी/एकवचन

7/2 - सप्तमी/बहुवचन

जीव अधिकार

(गाथा 1 से गाथा 19 तक)

1. णमिऊण जिणं वीरं अणंतवरणाणदंसणसहावं।
वोच्छामि णियमसारं केवलिसुदकेवलीभणिदं ।।

णमिऊण	संकृ	नमस्कार करके
जिणं	(जिण) 2/1	तीर्थंकर
वीरं	(वीर) 2/1	महावीर को
अणंतवरणाणदंसण-सहावं	{[(अणंत) वि-(वर) वि-(णाण)-(दंसण)-(सहाव) 2/1] वि}	अनन्त और श्रेष्ठ/उत्तम ज्ञान-दर्शन स्वभाववाले
वोच्छामि	(वोच्छ) भवि 1/1 सक	कहूँगा
णियमसारं	(णियमसार) 2/1	नियमसार को
केवलिसुदकेवली-भणिदं[1]	[(केवलि)-(सुदकेवलि→सुदकेवली)[2]-(भण) भूकृ 2/1]	केवलियों तथा श्रुतकेवलियों द्वारा प्रतिपादित

अन्वय- अणंतवरणाणदंसणसहावं जिणं वीरं णमिऊण केवलि-सुदकेवलीभणिदं णियमसारं वोच्छामि ।

अर्थ- अनन्त और श्रेष्ठ/उत्तम ज्ञान-दर्शन स्वभाववाले तीर्थंकर महावीर को नमस्कार करके (मैं) केवलियों तथा श्रुतकेवलियों द्वारा प्रतिपादित नियमसार को कहूँगा ।

---

1. प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 16 (ii)
2. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'सुदकेवलि' का 'सुदकेवली' हुआ है ।

2. मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं ।
मग्गो मोक्खउवाओ तस्स फलं होइ णिव्वाणं ॥

मग्गो	(मग्ग) 1/1	मार्ग
मग्गफलं ति	[(मग्गफलं)+(इति)]	
	मग्गफलं (मग्गफल) 1/1	मार्ग का फल
	इति (अ) =	वाक्यालंकार
य	अव्यय	और
दुविहं	(दुविह) 1/1 वि	दो प्रकार का
जिणसासणे	[(जिण)-(सासण) 7/1]	जिनेन्द्र भगवान के शासन में
समक्खादं	(समक्खाद) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
मग्गो	(मग्ग) 1/1	मार्ग
मोक्खउवाओ	[(मोक्ख)-(उवाअ) 1/1]	मोक्ष का उपाय
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसका
फलं	(फल) 1/1	फल
होइ	(हो) व 3/1 अक	होता है
णिव्वाणं	(णिव्वाण) 1/1	निर्वाण

अन्वय- जिणसासणे मग्गो य मग्गफलं ति दुविहं समक्खादं मोक्खउवाओ मग्गो तस्स फलं णिव्वाणं होइ ।

अर्थ- जिनेन्द्र भगवान के शासन में मार्ग और मार्ग का फल दो प्रकार का कहा गया (है)। मोक्ष का उपाय मार्ग (है) (और) उस (मार्ग) का फल निर्वाण (मोक्ष) होता है ।

3. णियमेण य जं कज्जं तं णियमं णाणदंसणचरित्तं।
विवरीयपरिहरत्थं भणिदं खलु सारमिदि वयणं॥

णियमेण	(णियमेण) 3/1 तृतीयार्थक अव्यय	आवश्यक रूप से
य	अव्यय	पादपूरक
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
कज्जं	(कज्ज) विधिकृ 1/1 अनि	पालन किया जाना चाहिए
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णियमं	(णियम) 1/1	णियम
णाणदंसणचरित्तं	[(णाण)-(दंसण)-(चरित्त) 1/1]	सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र
विवरीयपरिहरत्थं	[(विवरीय)-(परि)[1]अ (निरर्थक प्रयोग)-(हरत्थं) अ]	विपरीत भाव को हटानेवाला होने के कारण
भणिदं	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया
खलु	अव्यय	पादपूरक
सारमिदि	[(सारं)+(इदि)]	
	सारं (सार) 1/1 वि	पूर्णरूप से सिद्ध
	इदि (अ) = क्योंकि	क्योंकि
वयणं	(वयण) 1/1	वचन

अन्वय- जं णियमं णियमेण य कज्जं तं णाणदंसणचरित्तं भणिदं खलु विवरीयपरिहरत्थं सारमिदि वयणं।

अर्थ- जो नियम आवश्यक रूप से पालन किया जाना चाहिए वह सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र कहा गया (है), क्योंकि (वह नियम) विपरीत भाव (मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र) को हटानेवाला होने के कारण पूर्णरूप से सिद्ध वचन (है)।

---

1. 'पाइय-सद्द-महण्णवो' कोश

4. **णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं हवदि परमणिव्वाणं।**
एदेसिं तिण्हं पि य पत्तेयपरूवणा होइ ॥

णियमं	(णियम) 1/1	नियम
मोक्खउवाओ	[(मोक्ख)-(उवाअ) 1/1]	मोक्ष का उपाय
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसका
फलं	(फल) 1/1	फल
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
परमणिव्वाणं	[(परम) वि-(णिव्वाण) 1/1]	परम निर्वाण
एदेसिं	(एद) 4/2 सवि	इन
तिण्हं पि[1]	[(तिण्हं)+(अपि)]	
	तिण्हं (ति) 4/2 वि	तीनों के लिए
	अपि (अ) = इसके अतिरिक्त	इसके अतिरिक्त
य	अव्यय	और
पत्तेयपरूवणा[2]	[(पत्तेय) वि-(परूवणा) 1/1]	प्रत्येक का प्रतिपादन
होइ	(हो) व 3/1 अक	विद्यमान है

अन्वय- णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं परमणिव्वाणं हवदि य एदेसिं तिण्हं पि पत्तेयपरूवणा होइ।

अर्थ- (पूर्व कथित) (रत्नत्रय स्वरूप) (वह) नियम (एक साथ) मोक्ष का उपाय (है) उसका फल परम निर्वाण होता है और इसके अतिरिक्त इन तीनों के लिए प्रत्येक का (भिन्न-भिन्न) प्रतिपादन विद्यमान है।

---

1. प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 7 (i)
2. अभिनव प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 154

5. अत्तागमतच्चाणं सद्दहणादो हवेइ सम्मत्तं।
ववगयअसेसदोसो सयलगुणप्पा हवे अत्तो ॥

अत्तागमतच्चाणं	[(अत्त)+(आगमतच्चाणं)]	
	[(अत्त) वि-(आगम)-(तच्च) 6/2]	आप्त, आगम और तत्त्वों के
सद्दहणादो[1]	(सद्दहण) 5/1	श्रद्धान के कारण
हवेइ	(हव) व 3/1 अक	होता है
सम्मत्तं	(सम्मत्त) 1/1	सम्यक्त्व
ववगयअसेसदोसो	[(ववगय) भूकृ अनि-(असेस) वि-(दोस) 1/1]	समस्त दोष नष्ट कर दिये गये
सयलगुणप्पा[2]	[(सयल) वि-(गुणप्प) 1/1वि]	समस्त गुणों से युक्त
हवे	(हव) व 3/1 अक	होता है
अत्तो	(अत्त) 1/1 वि	आप्त

अन्वय- अत्तागमतच्चाणं सद्दहणादो सम्मत्तं हवेइ ववगयअसेसदोसो सयलगुणप्पा अत्तो हवे ।

अर्थ- आप्त, आगम और तत्त्वों के श्रद्धान के कारण सम्यक्त्व होता है। (जिनके द्वारा) समस्त दोष नष्ट कर दिये गये (हैं) (और) (जो) समस्त गुणों से युक्त (है) (वह) आप्त होता है ।

1. कारण व्यक्त करनेवाले शब्दों में तृतीया या पंचमी होती है ।
(प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 42)
2. समास के अंत में 'अप्प' शब्द का प्रयोग होने से इसका अर्थ 'से युक्त' होता है ।

6. **छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता जरा रुजा मिच्चू । सेदं खेद मदो रइ विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो ।।**

छुहतण्हभीरुरोसो	[(छुहा→छुह)[1]-(तण्हा→तण्ह)[1]-(भीरु) वि-(रोस) 1/1]	क्षुधा, तृषा, भयभीत, रोष
रागो	(राग) 1/1	राग
मोहो	(मोह) 1/1	मोह
चिंता	(चिंता) 1/1	चिंता
जरा	(जरा) 1/1	बुढ़ापा
रुजा	(रुजा) 1/1	रोग
मिच्चू	(मिच्चु) 1/1	मृत्यु
सेदं[2]	(सेद) 1/1	पसीना
खेद	(खेद) 1/1	खेद
मदो	(मद) 1/1	मद
*रइ	(रइ) 1/1	रति
*विम्हिय	(विम्हिय) 1/1 वि	चकित
णिद्दा	(णिद्दा) 1/1	निद्रा
जणुव्वेगो[3]	[(जण)+(उव्वेगो)] [(जण)-(उव्वेग) 1/1]	जन्म और अरति

अन्वय-छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता जरा रुजामिच्चू सेदं खेद मदो रइ विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो ।

अर्थ- क्षुधा, तृषा, भयभीत (होना), रोष, राग, मोह, चिंता, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु, पसीना, खेद, मद, रति, चकित (होना), निद्रा, जन्म और अरति (ये अठारह दोष) (हैं) ।

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'छुहा' का 'छुह' तथा 'तण्हा' का 'तण्ह' किया गया है ।
2. यहाँ अनुस्वार का आगम हुआ है। (प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 5, 6.1.ii)
3. प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 3, (4 क)

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है । (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

7. **णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो।**
सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ ण परमप्पा॥

णिस्सेसदोसरहिओ	[(णिस्सेस) वि-(दोस)-(रहिअ) भूकृ 1/1 अनि]	समस्त दोषों से रहित
केवलणाणाइपरम-विभवजुदो	[(केवलणाण)+(आइपरम-विभवजुदो)]	
	[(केवलणाण)-(आइ)-(परम) वि-(विभव)-(जुद) भूकृ 1/1 अनि]	केवलज्ञान आदि परम वैभव से युक्त
सो	(त) 1/1 सवि	वह
परमप्पा	(परमप्प) 1/1	तीर्थंकर
उच्चइ	(उच्चइ) व कर्म 3/1 अनि	कहा जाता है
तव्विवरीओ	(तव्विवरीअ) 1/1 वि अनि	उसके विपरीत
ण	अव्यय	नहीं
परमप्पा	(परमप्प) 1/1	तीर्थंकर

अन्वय- णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ परमप्पा ण।

अर्थ- (जो) (उपरोक्त) समस्त दोषों से रहित (है) (और) केवलज्ञान आदि परम वैभव से युक्त (है), वह तीर्थंकर कहा जाता है। उसके विपरीत तीर्थंकर नहीं (होते हैं)।

**8. तस्स मुहुग्गदवयणं पुव्वावरदोसविरहियं सुद्धं।
आगममिदि परिकहियं तेण दु कहिया हवंति तच्चत्था ॥**

तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
मुहुग्गदवयणं[1]	[(मुह)+(उग्गदवयणं)]	
	[(मुह)-(उग्गद) भूकृ अनि-(वयण) 1/1]	मुख से निकला हुआ वचन
पुव्वावरदोसविरहियं	[(पुव्वावर) वि-(दोस)-(विरहिय) 1/1 वि]	सब प्रकार के (पूर्वापर) दोषों से मुक्त
सुद्धं	(सुद्ध) 1/1 वि	शुद्ध
आगममिदि	[(आगमं)+(इदि)]	
	आगमं (आगम) 1/1	आगम
	इदि (अ) = अतः	अतः
परिकहियं	[(परि)[2]अ (निरर्थक प्रयोग)-(कह) भूकृ 1/1]	कहा गया
तेण	(त) 3/1 सवि	उसके द्वारा
दु	अव्यय	ही
कहिया	(कह) भूकृ 1/2	कहे गये
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
तच्चत्था	(तच्चत्थ) 1/2	तत्त्वार्थ

अन्वय- तस्स मुहुग्गदवयणं पुव्वावरदोसविरहियं सुद्धं आगममिदि परिकहियं तेण कहिया दु तच्चत्था हवंति ।

अर्थ- उस (आप्त) के मुख से निकला हुआ वचन (जो) सब प्रकार के (पूर्वापर) दोषों से मुक्त (हैं) अतः शुद्ध (है) (इसलिये) (वह) आगम कहा गया (है) (और) उस (आगम) के द्वारा कहे गये ही तत्त्वार्थ (द्रव्य) होते हैं ।

---

1. प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 3, (4 क)

2. 'पाइय-सद्द-महण्णवो' कोश

9. जीवा पोग्गलकाया धम्माधम्मा य काल आयासं।
तच्चत्था इदि भणिदा णाणागुणपज्जएहि[1] संजुत्ता ॥

जीवा	(जीव) 1/2	जीव
पोग्गलकाया	[(पोग्गल)-(काय) 1/2]	पुद्गलकाय
धम्माधम्मा	[(धम्म)+(अधम्मा)]	
	[(धम्म)-(अधम्म) 1/2]	धर्म-अधर्म
य	अव्यय	और
*काल	(काल) 1/1	काल
आयासं	(आयास) 1/1	आकाश
तच्चत्था	(तच्चत्थ) 1/2	तत्त्वार्थ
इदि	अव्यय	पादपूरक
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
णाणागुणपज्जएहि	[(णाणा)[2] वि-(गुण)-(पज्जअ) 3/2]	नाना प्रकार की गुण-पर्यायों से
संजुत्ता	(संजुत्त) भूकृ 1/2 अनि	युक्त

अन्वय- जीवा पोग्गलकाया धम्माधम्मा आयासं य काल णाणागुणपज्जएहि संजुत्ता तच्चत्था इदि भणिदा।

अर्थ- जीव, पुद्गलकाय, धर्म, अधर्म, आकाश और काल- (ये सभी) नाना प्रकार की गुण-पर्यायों से युक्त तत्त्वार्थ (द्रव्य) कहे गये (हैं)।

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'पज्जएहिं' के स्थान पर 'पज्जएहि' किया गया है।
2. यहाँ समास के आरंभ में 'णाणा' शब्द का प्रयोग विशेषण के रूप में हुआ है।

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

10. जीवो उवओगमओ उवओगो णाणदंसणो होइ।
णाणुवओगो दुविहो सहावणाणं विहावणाणं ति ॥

जीवो	(जीव) 1/1	जीव
उवओगमओ	(उवओगमअ) 1/1 वि	उपयोगमय
उवओगो	(उवओग) 1/1	उपयोग
णाणदंसणो	[(णाण)-(दंसण) 1/1 वि]	ज्ञान और दर्शनरूप
होइ	(हो) व 3/1 अक	है
णाणुवओगो	[(णाण)+(उवओग)]	
	[(णाण)-(उवओग) 1/1]	ज्ञान उपयोग
दुविहो	(दुविह) 1/1 वि	दो प्रकार का
सहावणाणं	[(सहाव)-(णाण) 1/1]	स्वभावज्ञान
विहावणाणं ति	[(विहावणाणं)+(इति)]	
	विहावणाणं [(विहाव)-(णाण) 1/1]	विभावज्ञान
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक

अन्वय- जीवो उवओगमओ उवओगो णाणदंसणो होइ णाणुवओगो दुविहो सहावणाणं विहावणाणं ति।

अर्थ- जीव उपयोगमय (है)। उपयोग ज्ञान और दर्शनरूप है। ज्ञान उपयोग दो प्रकार का (है)- स्वभावज्ञान (और) विभावज्ञान।

---

1. प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 3, (4 क)

11. केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावणाणं ति।
सण्णाणिदरवियप्पे विहावणाणं हवे दुविहं ॥

12. सण्णाणं चउभेयं मदिसुदओही तहेव मणपज्जं।
अण्णाणं तिवियप्पं मदियाई भेददो चेव ॥

केवलमिंदियरहियं	[(केवलं)+(इंदियरहियं)]	
	केवलं (केवल) 1/1	केवलज्ञान
	[(इंदिय)-(रहिय) 1/1 वि]	इन्द्रियों से रहित
असहायं	(असहाय) 1/1 वि	सहायता निरपेक्ष
तं	(त) 1/1 सवि	वह
सहावणाणं ति	[(सहावणाणं)+(इति)]	
	सहावणाणं [(सहाव)-(णाण) 1/1]	स्वभावज्ञान
	इति (अ) =	इसलिए
सण्णाणिदरवियप्पे	[(सण्णाण)+(इदरवियप्पे)]	
	[(सण्णाण)-(इदर) वि-(वियप्प)[1]7/1→5/1]	सीमित तथा निर्दोष ज्ञान (सम्यग्ज्ञान) (तथा) उससे भिन्न सीमित तथा सदोष ज्ञान (मिथ्याज्ञान) के भेद के कारण
विहावणाणं	[(विहाव)-(णाण) 1/1]	विभावज्ञान
हवे	(हव) व 3/1 अक	होता है
दुविहं	(दुविह) 1/1 वि	दो प्रकार का
सण्णाणं	(सण्णाण) 1/1	सम्यग्ज्ञान
चउभेयं	(चउभेय) 1/1 वि	चार प्रकार का

1. कभी-कभी पंचमी विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-136)

मदिसुदओही	[(मदि)-(सुद)-(ओहि) 1/1]	मति, श्रुत, अवधि
तहेव	अव्यय	उसी प्रकार
मणपज्जं	(मणपज्ज) 1/1	मनःपर्ययज्ञान
अण्णाणं	(अण्णाण) 1/1	अज्ञान
तिवियप्पं	(तिवियप्प) 1/1 वि	तीन प्रकार का
मदियाई	[(मदि)-(याइ) 1/2]	मति आदि
भेददो	(भेद) 5/1 पंचमीअर्थक 'दो' प्रत्यय	भेद से
चेव	अव्यय	पादपूरक

अन्वय- केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावणाणं ति विहावणाणं दुविहं हवे सण्णाणिदरवियप्पे सण्णाणं चउभेयं मदिसुदओही मणपज्जं तहेव अण्णाणं तिवियप्पं भेददो चेव मदियाई।

अर्थ- (चूँकि) केवलज्ञान इन्द्रियों से रहित (तथा) सहायता निरपेक्ष (होता) (है) इसलिए वह स्वभावज्ञान (असीमित ज्ञान) (है)। विभावज्ञान (असीमित ज्ञान से अलग हुआ ज्ञान) दो प्रकार का होता है: सीमित तथा निर्दोष ज्ञान अर्थात् सम्यग्ज्ञान और उससे भिन्न सीमित तथा सदोष ज्ञान (मिथ्याज्ञान) के भेद के कारण (यह विभाव ज्ञान) (असीमित ज्ञान से अलग हुआ ज्ञान) (दो प्रकार का कहा गया है)। (सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा) सीमित तथा निर्दोष ज्ञान अर्थात् सम्यग्ज्ञान चार प्रकार का (है): मति, श्रुत, अवधि तथा मनःपर्यय। उसी प्रकार सीमित तथा सदोष ज्ञान अर्थात् अज्ञान (मिथ्याज्ञान) तीन प्रकार का (होता है) (जो) भेद से मति आदि (कुमति, कुश्रुत और कुअवधि) (कहे जाते हैं)।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

13. तह दंसणउवओगो ससहावेदरवियप्पदो दुविहो।
केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावमिदि भणिदं ।।

तह	अव्यय	उसी प्रकार
दंसणउवओगो	[(दंसण)-(उवओग) 1/1]	दर्शन-उपयोग
ससहावेदरवियप्पदो	[(ससहाव)+(इदरवियप्पदो)]	
	[(स-सहाव) वि-(इदर) वि-(वियप्प) 5/1]	स्वभावसहित और विकल्पपूर्वक विरोधी
	पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	(विभावसहित)
दुविहो	(दुविह) 1/1 वि	दो प्रकार का
केवलमिंदियरहियं	[(केवलं)+(इंदियरहियं)]	
	केवलं (केवल) 1/1	केवलदर्शन
	इंदियरहियं [(इंदिय)-(रहिय) 1/1 वि]	इन्द्रियों से रहित
असहायं	(असहाय) 1/1 वि	असहाय
तं	(त) 1/1 सवि	वह
सहावमिदि	[(सहावं)+(इदि)]	
	सहावं[1](सहाव) 2/1→7/1	स्वभाव में
	इदि (अ) = इसलिए	इसलिए
भणिदं	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया

अन्वय-तह दंसणउवओगो ससहावेदरवियप्पदो दुविहो केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावमिदि भणिदं ।

अर्थ- उसी प्रकार दर्शन-उपयोग स्वभावसहित और विकल्पपूर्वक विरोधी (विभावसहित) दो प्रकार का (होता है) (उनमें) केवलदर्शन इन्द्रियों से रहित (और) असहाय (है) इसलिए वह (केवलदर्शन) स्वभाव में (विद्यमान) कहा गया (है) ।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

14. चक्खु अचक्खू ओही तिण्णि वि भणिदं विहावदिट्ठि त्ति ।
पज्जाओ दुवियप्पो सपरावेक्खो य णिरवेक्खो ।।

*चक्खु	(चक्खु) 1/1	चक्षु
अचक्खू	(अचक्खु) 1/1	अचक्षु
ओही	(ओहि) 1/1	अवधि
तिण्णि	(ति) 1/2 वि	तीनों
वि	अव्यय	ही
भणिदं[1]	(भण) भूकृ 2/1→1/2	कहे गये
विहावदिट्ठि त्ति	[(विहावदिट्ठी)+(इति)]	
	[(विहाव)-(दिट्ठि) 1/2]	विभावदर्शन
	इति (अ) =	समाप्तिसूचक
पज्जाओ	(पज्जाअ) 1/1	पर्याय
दुवियप्पो	(दुवियप्प) 1/1 वि	दो प्रकार की
सपरावेक्खो	(स-परावेक्ख) 1/1 वि	पर की अपेक्षा-सहित
य	अव्यय	और
णिरवेक्खो	(णिरवेक्ख) 1/1 वि	अपेक्षा-रहित

अन्वय- चक्खु अचक्खू ओही तिण्णि वि विहावदिट्ठि त्ति भणिदं पज्जाओ दुवियप्पो सपरावेक्खो य णिरवेक्खो ।

अर्थ- चक्षु, अचक्षु (और) अवधि (ये) तीनों ही विभावदर्शन कहे गये (हैं)। पर्याय दो प्रकार की (है): पर की अपेक्षा-सहित और (पर की) अपेक्षा-रहित ।

---

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है ।
(हेम-प्राकृत-व्याकरणः वृत्ति 3-137)

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है ।
(पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

**15. णरणारयतिरियसुरा पज्जाया ते विहावमिदि भणिदा।
कम्मोपाधिविवज्जियपज्जाया ते सहावमिदि भणिदा ।।**

णरणारयतिरियसुरा	[(णर)-(णारय)-(तिरिय)-(सुर) 1/2]	मनुष्य, नारकी, तिर्यंच और देव
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें
ते	(त) 1/2 सवि	वे
विहावमिदि	[(विहावं)+(इदि)]	
	विहावं[1] (विहाव) 2/1→1/2	विभाव
	इदि (अ) =	पादपूरक
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कही गई
कम्मोपाधिविवज्जिय-पज्जाया	[(कम्म)+(उपाधिविवज्जिय-पज्जाया)]	
	[(कम्म)-(उपाधि)-(विवज्जिय) वि-(पज्जाय) 1/2]	कर्मों के संयोग से रहित पर्यायें
ते	(त) 1/2 सवि	वे
सहावमिदि	[(सहावं)+(इदि)]	
	सहावं[1] (सहाव) 2/1→1/2	स्वभाव
	इदि (अ) =	पादपूरक
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कही गई

अन्वय- णरणारयतिरियसुरा पज्जाया ते विहावमिदि भणिदा कम्मोपाधिविवज्जियपज्जाया ते सहावमिदि भणिदा ।

अर्थ- (जो) मनुष्य, नारकी, तिर्यंच और देव पर्यायें (हैं) वे विभाव (पर्यायें) कही गई (हैं)। कर्मों के संयोग से रहित (जो) पर्यायें (हैं) वे स्वभाव (पर्यायें) कही गई (हैं) ।

---

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है ।
(हेम-प्राकृत-व्याकरणः वृत्ति 3-137)

16. माणुस्सा दुवियप्पा कम्ममहीभोगभूमिसंजादा।

सत्तविहा णेरइया णादव्वा पुढविभेदेण ॥

माणुस्सा	(माणुस्स) 1/2	मनुष्य
दुवियप्पा	(दुवियप्प) 1/2 वि	दो प्रकार के
कम्ममहीभोगभूमि-	[(कम्ममही)-(भोगभूमि)	कर्मभूमि और
संजादा	(संजाद) भूकृ 1/2 अनि]	भोगभूमि में उत्पन्न
सत्तविहा	(सत्तविह) 1/2 वि	सात प्रकार के
णेरइया	(णेरइय) 1/2	नारकी
णादव्वा	(णा) विधिकृ 1/2	समझे जाने चाहिए
पुढविभेदेण	[(पुढवि)-(भेद) 3/1]	पृथ्वी के भेद से

अन्वय- **माणुस्सा दुवियप्पा कम्ममहीभोगभूमिसंजादा पुढविभेदेण णेरइया सत्तविहा णादव्वा ।**

अर्थ- मनुष्य दो प्रकार के (होते हैं)- कर्मभूमि और भोगभूमि में उत्पन्न। पृथ्वी के भेद से नारकी सात प्रकार के समझे जाने चाहिए ।

17. चउदहभेदा भणिदा तेरिच्छा सुरगणा चउब्भेदा ।
एदेसिं वित्थारं लोयविभागेसु णादव्वं ॥

चउदहभेदा	[(चउदह)-(भेद) 1/2 वि]	चौदह भेदवाले
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
तेरिच्छा	(तेरिच्छ) 1/2	तिर्यंच
सुरगणा	(सुरगण) 1/2	देवसमूह
चउब्भेदा	(चउब्भेद) 1/2 वि	चार भेदवाले
एदेसिं	(एद) 6/2 सवि	इनका
वित्थारं	(वित्थार) 1/1	विस्तार
लोयविभागेसु[1]	[(लोय)-(विभाग) 7/2→3/2]	लोक-विभाग (नामक ग्रंथों) से
णादव्वं	(णा) विधिकृ 1/1	समझा जाना चाहिए

अन्वय- **तेरिच्छा चउदहभेदा सुरगणा चउब्भेदा भणिदा एदेसिं वित्थारं लोयविभागेसु णादव्वं ।**

अर्थ- तिर्यंच चौदह भेदवाले (तथा) देवसमूह चार भेदवाले कहे गये (हैं)। इनका विस्तार लोक-विभाग (नामक ग्रंथों) से समझा जाना चाहिए ।

---

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-135)

18. कत्ता भोत्ता आदा पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारा ।
कम्मजभावेणादा कत्ता भोत्ता दु णिच्छयदो ॥

कत्ता	(कत्तु) 1/1 वि	कर्ता
भोत्ता	(भोत्तु) 1/1 वि	भोक्ता
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
पोग्गलकम्मस्स	[(पोग्गल)-(कम्म) 6/1]	पुद्गल कर्मों का
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
ववहारा	(ववहार) 5/1	व्यवहारनय से
कम्मजभावेणादा	[(कम्मजभावेण)+(आदा)]	
	कम्मजभावेण[1] [(कम्मज) वि-(भाव) 3/1]	कर्म से उत्पन्न भाव के कारण
	आदा (आद) 1/1	आत्मा
कत्ता	(कत्तु) 1/1 वि	कर्ता
भोत्ता	(भोत्तु) 1/1 वि	भोक्ता
दु	अव्यय	और
णिच्छयदो[2]	(णिच्छय) 5/1	निश्चयनय से

अन्वय- ववहारा आदा पोग्गलकम्मस्स कत्ता भोत्ता होदि दु णिच्छयदो कम्मजभावेणादा कत्ता भोत्ता ।

अर्थ- व्यवहारनय (लोक (बाह्य) दृष्टि) से (संसारी) आत्मा पुद्गल कर्मों का कर्ता (और) भोक्ता होता है और निश्चयनय (आत्म (अंतरंग) दृष्टि) से (संसारी) (आत्मा) कर्म से उत्पन्न भाव के कारण (रागद्वेषात्मक भावों का) कर्ता (और) भोक्ता (होता है) ।

---

1. कारण व्यक्त करनेवाले शब्दों में तृतीया होती है ।
(प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 36)
2. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'णिच्छयादो' का 'णिच्छयदो' किया गया है ।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

19. **दव्वत्थिएण जीवा वदिरित्ता पुव्वभणिदपज्जाया।**
पज्जयणएण जीवा संजुत्ता होंति दुविहेहिं ॥

दव्वत्थिएण	(दव्वत्थिअ) 3/1	द्रव्यार्थिकनय से
जीवा	(जीव) 1/2	जीव
वदिरित्ता	(वदिरित्त) भूकृ 1/2 अनि	रहित
पुव्वभणिदपज्जाया	[(पुव्व) वि-(भणिद) भूकृ-(पज्जाय) 5/1]	पूर्व में कही गई पर्यायों से
पज्जयणएण	(पज्जयणअ) 3/1	पर्यायार्थिकनय से
जीवा	(जीव) 1/2	जीव
संजुत्ता	(संजुत्त) भूकृ 1/2 अनि	संयुक्त
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
दुविहेहिं	(दुविह) 3/2 वि	दो प्रकारों से

अन्वय-दव्वत्थिएण जीवा पुव्वभणिदपज्जाया वदिरित्ता पज्जयणएण जीवा संजुत्ता होंति दुविहेहिं ।

अर्थ- द्रव्यार्थिकनय से जीव पूर्व में कही गई पर्यायों से रहित (होते हैं)। पर्यायार्थिकनय से जीव (पूर्व में कही गई पर्यायों से) संयुक्त होते हैं। (इस प्रकार) (जीवों को) दो प्रकारों (द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयों) से (जानो)।

अजीव अधिकार

(गाथा 20 से गाथा 37 तक)

20. अणुखंधवियप्पेण दु पोग्गलदव्वं हवेदि दुवियप्पं ।
खंधा हु छप्पयारा परमाणू चेव दुवियप्पो ॥

अणुखंधवियप्पेण[1]	[(अणु)-(खंध)-(वियप्प) 3/1]	परमाणु और स्कंध भेद के कारण
दु	अव्यय	पादपूरक
पोग्गलदव्वं	[(पोग्गल)-(दव्व) 1/1]	पुद्गलद्रव्य
हवेदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
दुवियप्पं	(दुवियप्प) 1/1 वि	दो प्रकार का
खंधा	(खंध) 1/2	स्कन्ध
हु	अव्यय	पादपूरक
छप्पयारा	(छ-प्पयार) 1/2 वि	छ भेदवाले
परमाणू	(परमाणु) 1/1	परमाणु
चेव	अव्यय	और
दुवियप्पो[2]	(दुवियप्प) 1/1 वि	दो भेदवाला

अन्वय- अणुखंधवियप्पेण दु पोग्गलदव्वं दुवियप्पं हवेदि खंधा हु छप्पयारा चेव परमाणू दुवियप्पो ।

अर्थ- परमाणु और स्कंध भेद के कारण पुद्गलद्रव्य दो प्रकार का होता है। स्कंध छ भेदवाले (होते हैं) और परमाणु दो भेदवाला (होता है) (कार्य परमाणु और कारण परमाणु) ।

---

1. कारण व्यक्त करनेवाले शब्दों में तृतीया या पंचमी होती है ।
(प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 36)
2. कभी-कभी समूह अर्थ में द्विगु समास पुल्लिंग एकवचन में भी होता है ।
(प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 18)

21. अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं च सुहुमथूलं च ।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं ।।

*अइथूलथूल	[(अइ) अ (थूलथूल)1/1 वि]	अति स्थूलस्थूल
थूलं	(थूल) 1/1 वि	स्थूल
थूलसुहुमं	(थूलसुहुम) 1/1 वि	स्थूलसूक्ष्म
च	अव्यय	और
सुहुमथूलं	(सुहुमथूल) 1/1 वि	सूक्ष्मस्थूल
च	अव्यय	और
सुहुमं	(सुहुम) 1/1 वि	सूक्ष्म
अइसुहुमं	[(अइ) अ (सुहुम) 1/1 वि]	अतिसूक्ष्म
इदि	अव्यय	वाक्यार्थद्योतक
धरादियं	[(धरा)+(आदियं)]	
	[(धरा)-(आदिय) 1/1] 'य' स्वार्थिक	पृथ्वी आदि
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
छब्भेयं	(छ-ब्भेय) 1/1 वि	छ भेदरूप

अन्वय- अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं च सुहुमथूलं सुहुम च अइसुहुमं इदि धरादियं छब्भेदं होदि ।

अर्थ- (स्कन्ध) अति स्थूलस्थूल, स्थूल, स्थूलसूक्ष्म और सूक्ष्मस्थूल, सूक्ष्म और अति सूक्ष्म (होते हैं)। (इस प्रकार) पृथ्वी आदि (स्कन्ध) छ भेदरूप होता है ।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

नोटः इस गाथा में समाहार द्वन्द्व समास तथा समाहार द्विगु समास के नियम का प्रयोग किया गया है इसलिए सभी जगह नपुंसकलिंग एकवचन रखा गया है।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

22. भूपव्वदमादीया भणिदा अइथूलथूलमिदि खंधा ।
थूला इदि विण्णेया सप्पीजलतेल्लमादीया ।।

भूपव्वदमादीया	[(भूपव्वदं)+(आदीया)]	
	भूपव्वदं [(भू)-(पव्वद)[1] 2/1→1/2]	भूमि, पर्वत
	आदीया (आदिय)[2] 1/2 'य' स्वार्थिक	आदि
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
अइथूलथूलमिदि	[(अइथूलथूलं)+(इदि)]	
	अइथूलथूलं [(अइ) अ-(थूलथूल) 2/1→1/2 वि]	अति स्थूलस्थूल
	इदि (अ)=	शब्दस्वरूपद्योतक
खंधा	(खंध) 1/2	स्कन्ध
थूला	(थूल) 1/2 वि	स्थूल
इदि	अव्यय	शब्दस्वरूपद्योतक
विण्णेया	(विण्णेय) विधिकृ 1/2 अनि	समझे जाने चाहिये
सप्पीजलतेल्लमादीया	[(सप्पीजलतल्लं)+(आदीया)]	
	सप्पीजलतेल्लं [(सप्पि)[3]-(जल)-(तेल्ल)[1]2/1→1/2]	घी, जल, तेल
	आदीया[1] (आदिय) 1/2 'य' स्वार्थिक	आदि

अन्वय- भूपव्वदमादीया अइथूलथूलमिदि खंधा भणिदा सप्पीजल-तेल्लमादीया थूला इदि विण्णेया ।

अर्थ- भूमि, पर्वत आदि अति स्थूलस्थूल स्कंध कहे गये (हैं)। घी, जल, तेल आदि स्थूल (स्कंध) समझे जाने चाहिए।

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है ।
(हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137 वृत्ति)
2. छन्द की पूर्ति हेतु 'आदिय' का 'आदीय' किया गया है ।
3. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'सप्पि' के स्थान पर 'सप्पी' किया गया है ।

नोटः 22 और 23 गाथाओं में इतरेतर द्वन्दसमास के नियम का प्रयोग किया गया है । अतः बहुवचन का प्रयोग हुआ है तथा उत्तरपद के लिंग के अनुसार प्रथमा बहुवचन का प्रयोग हुआ है ।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

23. छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि वियाणाहि।
सुहुमथूलेदि भणिया खंधा चउरक्खविसया य ॥

छायातवमादीया	[(छायातवं)+(आदीया)]	
	छायातवं [(छाया)-(आतव)[1] 2/1→1/2]	छाया, आतप
	आदीया[2] (आदिय) 1/2	आदि
	'य' स्वार्थिक	
थूलेदरखंधमिदि	[(थूल)+(इदरखंधं)+(इदि)]	
	थूलेदरखंध[(थूल)वि-(इदर)वि-(खंध)[1] 2/1→1/2]	स्थूलसूक्ष्म स्कन्ध
	इदि (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
वियाणाहि[3]	(वियाण) विधि 2/1 सक	जानो
सुहुमथूलेदि	[(सुहुमथूला)+(इदि)]	
	सुहुमथूला (सुहुमथूल) 1/2 वि	सूक्ष्मस्थूल
	इदि (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
भणिया	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
खंधा	(खंध) 1/2	स्कन्ध
चउरक्खविसया	[(चउर)+(अक्खविसया)]	
	[(चउर) वि-(अक्ख)-(विसय) 1/2]	चार इन्द्रियों के विषय
य	अव्यय	तथा

अन्वय- छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि य सुहुमथूलेदि खंधा चउरक्खविसया भणिया वियाणाहि।

अर्थ-छाया, आतप (धूप) आदि स्थूलसूक्ष्म स्कंध तथा (जो) सूक्ष्मस्थूल स्कन्ध (हैं) (वे) चार इन्द्रियों (स्पशर्न, रसना, घ्राण, चक्षु) के विषय कहे गये (हैं)। (तुम) जानो।

---

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-157 वृत्ति)
2. छन्द की पूर्ति हेतु 'आदिय का 'आदीय' किया गया है।
3. विधिआज्ञा के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)

24. **सुहुमा हवंति खंधा पाओग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो ।**
तव्विवरीया खंधा अइसुहुमा इदि परूवेंति ।।

सुहुमा	(सुहुम) 1/2 वि	सूक्ष्म
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
खंधा	(खंध) 1/2	स्कन्ध
पाओग्गा	(पाओग्ग) 1/2 वि	योग्य
कम्मवग्गणस्स	[(कम्म)-(वग्गण)[1] 6/1]	कर्मवर्गणा के
पुणो	अव्यय	और
तव्विवरीया	(तव्विवरीय) 1/2 वि अनि	उनके विपरीत
खंधा	(खंध) 1/2	स्कन्ध
अइसुहुमा	[(अइ) अ-(सुहुम) 1/2 वि]	अति सूक्ष्म
इदि	अव्यय	इस प्रकार
परूवेंति	(परूव) व 3/2 सक	कहते हैं

अन्वय- कम्मवग्गणस्स पाओग्गा खंधा सुहुमा हवंति पुणो तव्विवरीया खंधा अइसुहुमा इदि परूवेंति ।

अर्थ- कर्मवर्गणा के योग्य स्कन्ध सूक्ष्म होते हैं और उनके विपरीत (कर्मवर्गणा के अयोग्य) स्कन्ध अति सूक्ष्म (होते हैं)। इस प्रकार (आचार्य) कहते हैं ।

---

1. अभिनव-प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 154

25. धाउचउक्कस्स पुणो जं हेऊ कारणं ति तं णेयो।
खंधाणं अवसाणं णादव्वो कज्जपरमाणु ॥

धाउचउक्कस्स	[(धाउ)-(चउक्क) 6/1]	चार धातुओं का
पुणो	अव्यय	फिर
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
हेऊ	(हेउ) 1/1	कारण
कारणं ति	[(कारणं)+(इति)]	
	कारणं (कारण) 1/1	आधार
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
तं	अव्यय	ही
णेयो	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	समझा जाना चाहिए
खंधाणं	(खंध) 6/2	स्कन्धों का
अवसाणं [1]	(अवसाण) 2/1→1/1	अंतिम भाग
णादव्वो	(णा) विधिकृ 1/1	ज्ञातव्य
कज्जपरमाणु*	[(कज्ज)-(परमाणु) 1/1]	कार्यपरमाणु

अन्वय- पुणो धाउचउक्कस्स जं कारणं ति तं हेऊ णेयो खंधाणं अवसाणं कज्जपरमाणु णादव्वो।

अर्थ- फिर चार धातुओं (पृथ्वी, जल, तेज और वायु) का जो आधार (है) (वह) ही कारण (परमाणु) समझा जाना चाहिए (और) (जो) स्कन्धों का अंतिम भाग (है) (वह) कार्यपरमाणु ज्ञातव्य (है)।

---

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है।
   (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137 वृत्ति)
   यहाँ 'अवसाण' शब्द पुल्लिंग की तरह प्रयुक्त हुआ है।

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है।
   (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

26. अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं णेव इंदियग्गेज्झं ।
अविभागी जं दव्वं परमाणू तं वियाणाहि ॥

अत्तादि	[(अत्त)+(आदि)]	
	[(अत्त) वि-(आदि)* 1/1]	अपना आदि
अत्तमज्झं	[(अत्त) वि-(मज्झ) 1/1]	अपना मध्य
अत्तंतं	[(अत्त)+(अंतं)]	
	[(अत्त) वि-(अंत) 1/1]	अपना अन्त
णेव	अव्यय	नहीं
इंदियग्गेज्झं	[(इंदिय)-(ग्गेज्झ)	इन्द्रियों द्वारा
	विधिकृ 1/1 अनि]	ग्रहण करने योग्य
अविभागी	(अविभागि) 1/1 वि अनि	अविभागी
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
दव्वं	(दव्व) 1/1	द्रव्य
परमाणू	(परमाणु) 1/1	परमाणु
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
वियाणाहि[1]	(वियाण) विधि 2/1 सक	जानो

अन्वय- जं दव्वं अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं इंदियग्गेज्झं णेव अविभागी तं वियाणाहि परमाणू ।

अर्थ- जो द्रव्य अपना आदि (है), अपना मध्य (है), अपना अन्त (है), इन्द्रियों द्वारा ग्रहण करने योग्य नहीं (है) (तथा) (जो) अविभागी (है) उसको जानो (कि) (वह) परमाणु (है) ।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है । (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. विधिआज्ञा के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है । (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)

27. एयरसरूवगंधं दोफासं तं हवे सहावगुणं।
विहावगुणमिदि भणिदं जिणसमये सव्वपयडत्तं ।।

एयरसरूवगंधं	[(एय) वि-(रस)-(रूव)-(गंध) 1/1]	एक रस, एक रूप और एक गंध
दोफासं	(दो-फास) 1/1	दो स्पर्श
तं	(त) 1/1 सवि	वह
हवे	(हव) व 3/1 अक	होता है
सहावगुणं	[(सहाव)-(गुण) 1/1]	स्वभावगुण
विहावगुणमिदि	[(विहावगुणं)+(इदि)]	
	विहावगुणं [(विहाव)-(गुण) 1/1]	विभावपर्याय
	इदि (अ) = ही	ही
भणिदं	(भण) भूकृ 1/1	कही गई
जिणसमये	[(जिण)-(समय) 7/1]	जिनशासन में
सव्वपयडत्तं	[(सव्व) सवि-(पयडत्त) 1/1]	प्रत्येक प्रकार की प्रकटता

अन्वय- **एयरसरूवगंधं दोफासं तं सहावगुणं हवे सव्वपयडत्तं जिणसमये विहावगुणमिदि भणिदं ।**

अर्थ-(परमाणु में) एक रस, एक रूप, एक गंध (और) दो स्पर्श (होते हैं) वह (पुद्गल का) स्वभावगुण होता है (किन्तु) प्रत्येक प्रकार की (स्कंधरूप) प्रकटता जिनशासन में (पुद्गल की) विभावपर्याय ही कही गई (है)।

28. **अण्णणिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ।**
खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जाओ ॥

अण्णणिरावेक्खो	[(अण्ण) वि-(णिरावेक्ख) 1/1 वि]	पर की अपेक्षा-रहित
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
परिणामो	(परिणाम) 1/1	परिणमन
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सहावपज्जाओ	[(सहाव)-(पज्जाअ) 1/1]	स्वभाव-पर्याय
खंधसरूवेण	[(खंध)-(सरूव) 3/1 वि]	स्कंध-स्वरूप से
पुणो	अव्यय	और
परिणामो	(परिणाम) 1/1	परिणमन
सो	(त) 1/1 सवि	वह
विहावपज्जाओ	[(विहाव)-(पज्जाअ) 1/1]	विभाव-पर्याय

अन्वय- अण्णणिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ पुणो खंधसरूवेण परिणामो सो विहावपज्जाओ।

अर्थ- पर की अपेक्षा-रहित जो परिणमन (है) वह स्वभाव-पर्याय (है) और स्कंध-स्वरूप से (जो) परिणमन है वह विभाव-पर्याय (है)।

29. पोग्गलदव्वं उच्चइ परमाणू णिच्छएण इदरेण ।
पोग्गलदव्वो त्ति पुणो ववदेसो होदि खंधस्स ॥

पोग्गलदव्वं	[(पोग्गल)-(दव्व) 1/1]	पुद्गलद्रव्य
उच्चइ	(उच्चइ) व कर्म 3/1 अनि	कहा जाता है
परमाणू	(परमाणु) 1/1	परमाणु
णिच्छएण	(णिच्छय) 3/1	निश्चयनय से
इदरेण	(इदर) 3/1 वि	इससे भिन्न (व्यवहारनय) से
पोग्गलदव्वो त्ति	[(पोग्गलदव्वो)+(इति)]	
	पोग्गलदव्वो [(पोग्गल)-(दव्व) 1/1]	पुद्गलद्रव्य
	इति (अ) =	पादपूरक
पुणो	अव्यय	और
ववदेसो	(ववदेस) 1/1	नाम
होदि	(हो) व 3/1 अक	है
खंधस्स	(खंध) 6/1	स्कंध का

अन्वय- णिच्छएण परमाणू पोग्गलदव्वं उच्चइ पुणो इदरेण खंधस्स ववदेसो पोग्गलदव्वो त्ति होदि ।

अर्थ- निश्चयनय (मूलदृष्टि) से परमाणु पुद्गलद्रव्य कहा जाता है और इससे भिन्न (व्यवहारनय-लोकदृष्टि) से स्कन्ध का नाम पुद्गलद्रव्य है ।

30. गमणणिमित्तं धम्ममधम्मं ठिदि जीवपोग्गलाणं च ।
अवगहणं आयासं जीवादीसव्वदव्वाणं ॥

गमणणिमित्तं	[(गमण)-(णिमित्त) 1/1]	गति में निमित्त
धम्ममधम्मं	[(धम्मं)+(अधम्मं)]	
	धम्मं (धम्म) 1/1	धर्म
	अधम्मं (अधम्म) 1/1	अधर्म
*ठिदि	(ठिदि) 7/1	ठहरने में
जीवपोग्गलाणं	[(जीव)-(पोग्गल) 6/2]	जीव और पुद्गलद्रव्यों की
च	अव्यय	और
अवगहणं[1]	(अवगहण) 2/1→7/1	अवगाहन में
आयासं	(आयास) 1/1	आकाश
जीवादीसव्वदव्वाणं	[(जीव)+(आदीसव्व-दव्वाणं)]	
	[(जीव)-(आदी→आदि)-(सव्व) सवि-(दव्व) 6/2]	जीव आदि सभी द्रव्यों के

अन्वय- जीवपोग्गलाणं गमणणिमित्तं धम्मं च ठिदि अधम्मं जीवादीसव्वदव्वाणं अवगहणं आयासं ।

अर्थ- जीव और पुद्गलद्रव्यों की गति में (जो) निमित्त (है) (वह) धर्म (द्रव्य) और ठहरने में (जो) (निमित्त) (है) (वह) अधर्म (द्रव्य) (है)। जीव आदि सभी द्रव्यों के अवगाहन (स्थान देने) में (जो निमित्त) (है) (वह) आकाश (द्रव्य) (है) ।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है । (पिशलः प्राकृत भाषाओंका व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

31. समयावलिभेदेण दु दुवियप्पं अहव होइ तिवियप्पं ।
तीदो संखेज्जावलिहदसंठाणप्पमाणं तु ॥

समयावलिभेदेण	[(समय)+(आवलिभेदेण)]	
	[(समय)-(आवलि)-(भेद) 3/1]	समय और आवलि के भेद से
दु	अव्यय	तो
दुवियप्पं	(दुवियप्प) 1/1 वि	दो प्रकार की
अहव	अव्यय	अथवा
होइ	(हो) व 3/1 अक	होती है
तिवियप्पं	(तिवियप्प) 1/1 वि	तीन प्रकार की
तीदो	(तीद) 1/1 वि	भूतकाल
संखेज्जावलिहद-संठाणप्पमाणं	[(संखेज्ज)+(आवलिहद-संठाणप्पमाणं)]	
	[(संखेज्ज) वि-(आवलि)-(हद) वि-(संठाण)[1]-(प्पमाण) 1/1]	संख्यात आवलि से गुणित संस्थान प्रमाण
तु	अव्यय	किन्तु

अन्वय- समयावलिभेदेण दु दुवियप्पं होइ अहव तिवियप्पं तु तीदो संखेज्जावलिहदसंठाणप्पमाणं ।

अर्थ- समय और आवलि के भेद से तो (कालद्रव्य की पर्याय) दो प्रकार की होती है अथवा (वर्तमान, भूत और भविष्यत्काल के भेद से) तीन प्रकार की (भी होती है) किन्तु भूतकाल संख्यात आवलि से गुणित संस्थान प्रमाण (होता है) ।

1. विस्तार के लिए देखें: गोम्मटसार जीवकाण्ड ।

32. जीवादु पोग्गलादो णंतगुणा चावि संपदा समया ।
लोयायासे संति य परमट्ठो सो हवे कालो ॥

जीवादु[1]	(जीव) 5/1	जीवद्रव्य से
पोग्गलादो[1]	(पोग्गल) 5/1	पुद्गलद्रव्य से
णंतगुणा	(णंतगुण) 1/2 वि	अनन्त गुणी
चावि	अव्यय	और
संपदा	(संपदा) 1/2	संपदा
समया	(समय) 1/2 वि	समयपर्यायरूपी
लोयायासे	(लोयायास) 7/1	लोकाकाश में
संति	(संति) व 3/2 अक अनि	होती हैं
य	अव्यय	और
परमट्ठो	(परमट्ठ) 1/1 वि	परमार्थ (द्रव्य)
सो	(त) 1/1 सवि	वह
हवे	(हव) व 3/1 अक	है
कालो	(काल) 1/1	काल

अन्वय- जीवादु चावि पोग्गलादो णंतगुणा समया संपदा लोयायासे संति य सो परमट्ठो कालो हवे ।

अर्थ- जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य से अनन्त गुणी समयपर्यायरूपी संपदा लोकाकाश में होती हैं और (उसका आधार) वह (समूहरूप में) परमार्थ (द्रव्य) काल है (उससे ही समयपर्यायरूपी संपदा उत्पन्न होती है) ।

---

1. तुलना अर्थ में पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है ।
(प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 44)

33. जीवादीदव्वाणं परिवट्टणकारणं हवे कालो ।
धम्मादिचउण्हं णं सहावगुणपज्जया होंति ॥

जीवादीदव्वाणं	[(जीव)+(आदीदव्वाणं)]	
	[(जीव)-(आदी→आदि)-	जीवादि
	(दव्व) 6/2]	द्रव्यों के
परिवट्टणकारणं	[(परिवट्टण)-(कारण) 1/1]	परिणमन में कारण
हवे	(हव) व 3/1 अक	होता है
कालो	(काल) 1/1	काल
धम्मादिचउण्हं	[(धम्म)+(आदिचउण्हं)]	
	[(धम्म)-(आदि)-	धर्म आदि चार
	(चउ) 6/2→7/2 वि]	(द्रव्यों) में
णं	अव्यय	निश्चय ही
सहावगुणपज्जया	[(सहाव)-(गुण)-	स्वभाव गुण पर्यायें
	(पज्जय) 1/2]	
होंति	(हो) व 3/2 अक	होती हैं

अन्वय- जीवादी दव्वाणं परिवट्टणकारणं हवे कालो धम्मादिचउण्हं णं सहावगुणपज्जया होंति ।

अर्थ- जीवादि द्रव्यों के परिणमन में (जो) कारण होता है (वह) काल (द्रव्य है)। (परिणमन के फलस्वरूप) धर्म आदि चार (द्रव्यों) में निश्चय ही स्वभाव गुण पर्यायें होती हैं ।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

34. एदे छद्दव्वाणि य कालं मोत्तूण अत्थिकाय त्ति ।
णिद्दिट्ठा जिणसमये काया हु बहुप्पदेसत्तं ॥

एदे	(एद) 1/2 सवि	ये
छद्दव्वाणि	[(छ)-(द्दव्व) 1/2]	छ द्रव्य
य	अव्यय	पादपूरक
कालं	(काल) 2/1	काल को
मोत्तूण	(मोत्तूण) संकृ अनि	छोड़कर
अत्थिकाय त्ति	[(अत्थिकाया)+(इति)]	
	अत्थिकाया (अत्थिकाय) 1/2 वि	अस्तिकायवाले
	इति (अ) =	शब्दस्वरूपद्योतक
णिद्दिट्ठा	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/2 अनि	कहे गये
जिणसमये	(जिणसमय) 7/1	जिनशासन में
काया	(काय) 1/2	काय
हु	अव्यय	पादपूरक
बहुप्पदेसत्तं	[(बहु) वि-(प्पदेसत्त) 1/1]	बहुप्रदेशता

अन्वय- छद्दव्वाणि य कालं मोत्तूण एदे जिणसमये अत्थिकाय त्ति हु णिद्दिट्ठा बहुप्पदेसत्तं काया ।

अर्थ- (लोक में) (पूर्व कथित) छ द्रव्य (हैं) । काल (द्रव्य) को छोड़कर ये (पाँच द्रव्य) जिनशासन में अस्तिकायवाले कहे गये (हैं) । बहुप्रदेशता काय (कही गई है) ।

35. संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा हवंति मुत्तस्स ।
धम्माधम्मस्स पुणो जीवस्स असंखदेसा हु ॥

संखेज्जासंखेज्जा-णंतपदेसा	[(संखेज्ज)+(असंखेज्ज)+(अणंतपदेसा)]	
	[(संखेज्ज)वि-(असंखेज्ज)वि-(अणंत) वि (पदेस) 1/2]	संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
मुत्तस्स	(मुत्त) 6/1 वि	मूर्त (पुद्गलद्रव्य) के
धम्माधम्मस्स	[(धम्म)+(अधम्मस्स)]	
	[(धम्म)-(अधम्म) 6/1]	धर्म और अधर्म (द्रव्य) के
पुणो	अव्यय	तथा
जीवस्स	(जीव) 6/1	जीव के
असंखदेसा	[(असंख)-(देस) 1/2]	असंख्यात प्रदेश
हु	अव्यय	पादपूरक

अन्वय- **मुत्तस्स संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा हवंति धम्माधम्मस्स पुणो जीवस्स असंखदेसा हु ।**

अर्थ- मूर्त (पुद्गलद्रव्य) के संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश होते हैं। धर्म (द्रव्य), अधर्म (द्रव्य) तथा जीव (द्रव्य) के असंख्यात प्रदेश (होते हैं)।

36. लोयायासे तावं इदरस्स अणंतयं हवे देसा।
कालस्स ण कायत्तं एयपदेसो हवे जम्हा ॥

लोयायासे	(लोयायास) 7/1	लोकाकाश में
तावं	(ताव) 2/1→1/2	उतने
इदरस्स	(इदर) 6/1 वि	इससे भिन्न के
अणंतयं[1]	(अणंतय) 2/1→1/2 वि 'य' स्वार्थिक	अनन्त
हवे	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
देसा	(देस) 1/2	प्रदेश
कालस्स	(काल) 6/1	काल (द्रव्य) का
ण	अव्यय	नहीं
कायत्तं	(काय) 1/1	कायत्व
एयपदेसो	[(एय) वि-(पदेस) 1/1]	एक प्रदेश
हवे	(हव) व 3/1 अक	होता है
जम्हा	अव्यय	क्योंकि

अन्वय- लोयायासे तावं इदरस्स अणंतयं देसा हवे कालस्स एयपदेसो हवे जम्हा कायत्तं ण ।

अर्थ- लोकाकाश में उतने (ही) (असंख्यात) (प्रदेश होते हैं) इससे भिन्न (अलोकाकाश) के अनन्त प्रदेश होते हैं। काल (द्रव्य) का एक प्रदेश होता है क्योंकि (कालद्रव्य के) कायत्व नहीं (है)।

---

1. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137 वृत्ति)

37. पोग्गलदव्वं मुत्तं मुत्तिविरहिया हवंति सेसाणि।
चेदणभावो जीवो चेदणगुणवज्जिया सेसा ॥

पोग्गलदव्वं	[(पोग्गल)-(दव्व) 1/1]	पुद्गलद्रव्य
मुत्तं	(मुत्त) 1/1 वि	मूर्त
मुत्तिविरहिया	[(मुत्ति) वि-(विरहिय) 1/2 वि]	मूर्तिरहित
हवंति	(हव) व 3/2 अक	होते हैं
सेसाणि	(सेस) 1/2	शेष
चेदणभावो	[(चेदण)-(भाव) 1/1 वि]	चेतन-स्वभाववाला
जीवो	(जीव) 1/1	जीव
चेदणगुणवज्जिया	[(चेदण)-(गुण)-(वज्जिय) 1/2 वि]	चेतना-गुण से रहित
सेसा	(सेस) 1/2 वि	शेष

अन्वय- पोग्गलदव्वं मुत्तं सेसाणि मुत्तिविरहिया हवंति जीवो चेदणभावो सेसा चेदणगुणवज्जिया।

अर्थ- पुद्गलद्रव्य मूर्त (इन्द्रिय ग्राह्य) (होता है) (और) शेष (द्रव्य) मूर्तिरहित (इन्द्रिय अग्राह्य) होते हैं। जीव (द्रव्य) चेतन-स्वभाववाला (होता है) (और) शेष (द्रव्य) चेतना-गुण से रहित (होते हैं)।

शुद्धभाव अधिकार

(गाथा 38 से गाथा 55 तक)

38. जीवादिबहित्तच्चं हेयमुवादेयमप्पणो अप्पा।
कम्मोपाधिसमुब्भवगुणपज्जाएहिं वदिरित्तो ॥

जीवादिबहित्तच्चं	[(जीव)+(आदिबहित्तच्चं)]	
	[(जीव)-(आदि)-(बहित्तच्च) 1/1]	जीवादि बाह्य/पर द्रव्य
हेयमुवादेयमप्पणो	[(हेयं)+(उवादेयं)+(अप्पणो)]	
	हेयं (हेय) 1/1 वि	हेय
	उवादेयं (उवादेय) 1/1 वि	उपादेय
	अप्पणो (अप्प) 6/1	निज की
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
कम्मोपाधिसमुब्भव-गुणपज्जाएहिं	[(कम्म)+(उपाधिसमुब्भव-गुणपज्जाएहिं)]	
	[(कम्म)-(उपाधि)-(समुब्भव) वि-(गुण)-(पज्जाअ) 3/2]	कर्मों के संयोग से उत्पन्न (विभाव) गुणपर्यायों से
वदिरित्तो	(वदिरित्त) 1/1 वि	रहित

अन्वय- जीवादिबहित्तच्चं हेयं कम्मोपाधिसमुब्भवगुणपज्जाएहिं वदिरित्तो अप्पणो अप्पा उवादेयं ।

अर्थ- (लोक के घटक) जीवादि (द्रव्य हैं) (जो) बाह्य/पर द्रव्य (हैं)। (इसलिए आध्यात्मिक साधक के लिए) (वे) हेय (कहे जाते हैं) (किन्तु) (साधना के इच्छुक मनुष्यों के लिए) कर्मों के संयोग से उत्पन्न (विभाव) गुणपर्यायों से रहित निज की आत्मा (ही) उपादेय (है)।

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति के लिए 'पज्जाएहिं' के स्थान पर 'पज्जाएहि' होना चाहिए।

नोटः **संपादक द्वारा अनूदित**
इसका अर्थ परम्परा से भिन्न किया गया है।

39. णो खलु सहावठाणा णो माणवमाणभावठाणा वा।
णो हरिसभावठाणा णो जीवस्साहरिस्सठाणा वा ॥

णो	अव्यय	नहीं
खलु	अव्यय	वाक्यालंकार
सहावठाणा	[(सहाव)-(ठाण) 1/2]	स्वभाव से (उत्पन्न) पर्यायें
णो	अव्यय	नहीं
माणवमाणभावठाणा	[(माण)+(अवमाणभावठाणा)]	
	[(माण)-(अवमाण)-(भाव)-(ठाण) 1/2]	मान-अपमान की भाव दशाएँ
वा	अव्यय	और
णो	अव्यय	नहीं
हरिसभावठाणा	[(हरिस)-(भाव) (ठाण) 1/2]	हर्ष की भाव दशाएँ
णो	अव्यय	नहीं
जीवस्साहरिस्सठाणा	[(जीवस्स)+(अहरिस्सठाणा)]	
	जीवस्स[1] (जीव) 6/1→7/1	जीव में
	अहरिस्सठाणा [(अहरिस्स)-(ठाण) 1/2]	खेद की भाव दशाएँ
वा	अव्यय	भी

अन्वय- जीवस्स सहावठाणा णो खलु माणवमाणभावठाणा णो हरिसभावठाणा णो वा अहरिस्सठाणा वा णो।

अर्थ- जीव में (परम आत्मा में) (अनेक विभाव पर्यायों की तरह) स्वभाव से (उत्पन्न) (अनेक) पर्यायें नहीं (होती)। (वहाँ) मान-अपमान की भाव दशाएँ नहीं (होती है)। हर्ष की भाव दशाएँ नहीं (है) और खेद की भाव दशाएँ भी नहीं (होती है)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

40. णो ठिदिबंधट्ठाणा पयडिट्ठाणा पदेसठाणा वा।
णो अणुभागट्ठाणा जीवस्स ण उदयठाणा वा ॥

णो	अव्यय	नहीं
ठिदिबंधट्ठाणा	[(ठिदि)-(बंध)-(ट्ठाण) 1/2]	स्थितिबंध की भावदशा
पयडिट्ठाणा	[(पयडि)-(ट्ठाण) 1/2]	प्रकृतिबंध की भावदशा
पदेसठाणा	[(पदेस)-(ठाण) 1/2]	प्रदेशों में परस्पर प्रवेश की स्थिति/अवसर
वा	अव्यय	भी
णो	अव्यय	नहीं
अणुभागट्ठाणा	[(अणुभाग)-(ट्ठाण) 1/2]	अनुभागबंध की अवस्था
जीवस्स[1]	(जीव) 6/1→7/1	जीव में
ण	अव्यय	नहीं
उदयठाणा	[(उदय)-(ठाण) 1/2]	उदय का कारण
वा	अव्यय	भी

अन्वय- जीवस्स ठिदिबंधट्ठाणा णो पयडिट्ठाणा पदेसठाणा वा णो अणुभागट्ठाणा वा ण उदयठाणा।

अर्थ- जीव (परम आत्मा) में (कर्मों के) स्थितिबंध की भावदशा नहीं (है), (कर्म) प्रकृतिबंध की (भी) भावदशा (नहीं है)। (कर्मपुद्गलों का आत्मा के) प्रदेशों में परस्पर प्रवेश की स्थिति/अवसर भी नहीं (है)। अनुभागबंध (कर्मफल शक्ति) की अवस्था भी नहीं (है) (तथा) (परम आत्मा में) (कर्म के) उदय का कारण (ही) (नहीं है)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

41. णो खइयभावठाणा णो खयउवसमसहावठाणा वा ।
ओदइयभावठाणा णो उवसमणे सहावठाणा वा ॥

णो	अव्यय	नहीं
खइयभावठाणा	[(खइय)-(भाव)-(ठाण) 1/2]	क्षय की भावदशा
णो	अव्यय	नहीं
खयउवसमसहाव-ठाणा	[(खय)-(उवसम)-(सहाव)-(ठाण) 1/2]	क्षयोपशम से उत्पन्न स्वभावदशा
वा	अव्यय	तथा
ओदइयभावठाणा	[(ओदइय) वि-(भाव)-(ठाण) 1/2]	उदय से उत्पन्न भाव दशा
णो	अव्यय	नहीं
उवसमणे[1]	(उवसमण) 7/1→3/1	उपशम से
सहावठाणा	[(सहाव)-(ठाण) 1/2]	स्वभाव दशा
वा	अव्यय	भी

अन्वय- खइयभावठाणा णो खयउवसमसहावठाणो णो ओदइयभाव-ठाणा णो वा उवसमणे सहावठाणा वा ।

अर्थ- (परम आत्मा में) (कर्मों के अल्पकालिक) क्षय की भावदशा नहीं (है), (कर्मों के) क्षयोपशम से उत्पन्न स्वभावदशा नहीं (है) । (कर्मों के) उदय से उत्पन्न भाव दशा नहीं (है) तथा (कर्मों के) उपशम से (उत्पन्न) स्वभाव दशा भी (नहीं है) ।

1. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-135)

42.. चउगइभवसंभमणं जाइजरामरणरोगसोगा य।
कुलजोणिजीवमग्गणठाणा जीवस्स णो संति।।

चउगइभवसंभमणं	[(चउ) वि-(गइ)-(भव)-(संभमण) 1/1]	चारगतिरूप संसार में परिभ्रमण
जाइजरामरणरोग-सोगा	[(जाइ)-(जरा)-(मरण)-(रोग)-(सोग) 1/2]	जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु, व्याधि, खेद
य	अव्यय	और
कुलजोणिजीवमग्गण-ठाणा	[(कुल)-(जोणि)-(जीव)-(मग्गण)-(ठाण) 1/2]	वंश, उत्पत्ति स्थान जीवस्थान, मार्गणा स्थान
जीवस्स	(जीव) 4/1	जीव के लिये
णो	अव्यय	नहीं
संति	(संति) व 3/2 अक अनि	होते हैं

अन्वय- जीवस्स चउगइभवसंभमणं जाइजरामरणरोगसोगा कुलजोणिजीवमग्गणठाणा य णो संति।

अर्थ- जीव (परम-आत्मा) के लिये चारगतिरूप संसार में परिभ्रमण, जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु, व्याधि, खेद, वंश, उत्पत्ति स्थान, जीवस्थान और मार्गणास्थान नहीं होते हैं।

नोटः विस्तार के लिए टीका देखें।

43. णिद्दंडो णिद्दंद्दो णिम्ममो णिक्कलो णिरालंबो ।
णीरागो णिद्दोसो णिम्मूढो णिब्भयो अप्पा ॥

णिद्दंडो	(णिद्दंड) 1/1 वि	मन-वचन-काय के स्पंदनरहित
णिद्दंद्दो	(णिद्दंद्द) 1/1 वि	विरोधी विकल्परहित
णिम्ममो	(णिम्मम) 1/1 वि	पर से तादात्म्यरहित
णिक्कलो	(णिक्कल) 1/1 वि	शरीररहित
णिरालंबो	(णिरालंब) 1/1 वि	पराश्रयरहित
णीरागो	(णीराग) 1/1 वि	शुभ-अशुभ रागरहित
णिद्दोसो	(णिद्दोस) 1/1 वि	दोष/द्वेष रहित
णिम्मूढो	(णिम्मूढ) 1/1 वि	मूर्च्छा/अविवेकरहित
णिब्भयो	(णिब्भय) 1/1 वि	भयरहित
अप्पा	(अप्प) 1/1	(परम) आत्मा

अन्वय- अप्पा णिद्दंडो णिद्दंद्दो णिम्ममो णिक्कलो णिरालंबो णीरागो णिद्दोसो णिम्मूढो णिब्भयो ।

अर्थ- (परम) आत्मा मन-वचन-काय के स्पंदनरहित, विरोधी (जैसे- सुख-दुख, मान-अपमान आदि) विकल्परहित, पर से तादात्म्यरहित, (पाँच)[1] शरीररहित, पराश्रयरहित, शुभ-अशुभ रागरहित, दोष (कर्ममल)/द्वेष (वैर) रहित, मूर्च्छा/अविवेकरहित (और) (सात)[2] भयरहित (होता है) ।

---

1. पाँच शरीर- (1) औदारिक (2) वैक्रियिक (3) आहारक (4) तैजस (5) कार्मण ।

2. सात भय- (1) इहलोक (2) परलोक (3) अत्राण (4) अगुप्ति (5) मरण (6) वेदना (7) आकस्मिक ।

44. णिग्गंथो णीरागो णिस्सल्लो सयलदोसणिम्मुक्को ।
णिक्कामो णिक्कोहो णिम्माणो णिम्मदो अप्पा ।।

णिग्गंथो	(णिग्गंथ) 1/1 वि	परिग्रहरहित
णीरागो	(णीराग) 1/1 वि	आसक्तिरहित
णिस्सल्लो	(णिस्सल्ल) 1/1 वि	शल्यरहित
सयलदोसणिम्मुक्को	[(सयल) वि-(दोस)-(णिम्मुक्क) भूकृ 1/1 अनि]	समस्त दोषों से रहित
णिक्कामो	(णिक्काम) 1/1 वि	वासनारहित
णिक्कोहो	(णिक्कोह) 1/1 वि	क्रोधरहित
णिम्माणो	(णिम्माण) 1/1 वि	अहंकाररहित
णिम्मदो	(णिम्मद) 1/1 वि	मदरहित
अप्पा	(अप्प) 1/1	(परम) आत्मा

अन्वय- अप्पा णिग्गंथो णीरागो णिस्सल्लो सयलदोसणिम्मुक्को णिक्कामो णिक्कोहो णिम्माणो णिम्मदो ।

अर्थ- (परम) आत्मा परिग्रहरहित, आसक्तिरहित, (तीन) शल्य[1] रहित, समस्त दोषों से रहित, वासनारहित, क्रोधरहित, अहंकाररहित (और) (आठ) मदरहित[2] (होता है) ।

---

1. तीन शल्य- (1) माया शल्य- कपट (2) मिथ्या शल्य- आत्मा में अश्रद्धान (3) निदान शल्य- भोगों की लालसा ।

2. आठ मद- (1) ज्ञान-मद (2) पूजा-मद (3) कुल-मद (4) जातिं-मद (5) बल-मद (6) रूप-मद (7) तप-मद (8) ऋद्धि-मद ।

45. वण्णरसगंधफासा थीपुंसणउंसयादिपज्जाया।
संठाणा संहणणा सव्वे जीवस्स णो संति ॥

वण्णरसगंधफासा	[(वण्ण)-(रस)-(गंध)-(फास) 1/2]	वर्ण, रस, गंध और स्पर्श
थीपुंसणउंसयादि-पज्जाया	[(थीपुंसणउंसय)+(आदिपज्जाया)]	
	[(थी)-(पुंस)-(णउंसय)-(आदि)-(पज्जाय) 1/2]	स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि पर्यायें
संठाणा	(संठाण) 1/2	संठाण
संहणणा	(संहणण) 1/2	संहनन
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
जीवस्स	(जीव) 4/1	जीव के लिये
णो	अव्यय	नहीं
संति	(संति) व 3/2 अक अनि	होते हैं

अन्वय- वण्णरसगंधफासा थीपुंसणउंसयादिपज्जाया संठाणा संहणणा सव्वे जीवस्स णो संति ।

अर्थ- वर्ण, रस, गंध, स्पर्श (गुण), स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि पर्यायें, संठाण (शरीर आकार), संहनन (शरीर की हड्डियाँ आदि)- (ये) सभी जीव (परम आत्मा) के लिये नहीं होते हैं ।

46. **अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।**
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ।।

अरसमरूवमगंधं	[(अरसं)+(अरूवं)+(अगंधं)]	
	अरसं (अरस) 2/1 वि	रसरहित
	अरूवं (अरूव) 2/1 वि	रूपरहित
	अगंधं (अगंध) 2/1 वि	गंधरहित
अव्वत्तं	(अव्वत्त) 2/1 वि	अप्रकट
चेदणागुणमसद्दं	[(चेदणागुणं)+(असद्दं)]	
	चेदणागुणं (चेदणगुण) 2/1 वि	चेतना गुणवाला
	असद्दं (असद्द) 2/1 वि	शब्दरहित
जाण	(जाण) विधि 2/1 सक	जानो
अलिंगग्गहणं	(अलिंगग्गहण) 2/1 वि	तर्क से ग्रहण न होनेवाला
जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं	[(जीवं)+(अणिद्दिट्ठसंठाणं)]	
	जीवं (जीव) 2/1	जीव को
	[(अणिद्दिट्ठ) भूकृ अनि-(संठाण) 2/1 वि]	न कहे हुए आकारवाला

अन्वय- जीवं अरसं अरूवं अगंधं अव्वत्तं चेदणागुणं असद्दं अलिंगग्गहणं अणिद्दिट्ठसंठाणं जाण ।

अर्थ- (तुम) जीव को रसरहित, रूपरहित, गंधरहित, (स्पर्श से भी) अप्रकट, चेतना गुणवाला, शब्दरहित, तर्क से ग्रहण न होनेवाला (तथा) न कहे हुए आकारवाला जानो। (विभिन्न जीवों द्वारा विभिन्न शरीराकार ग्रहण किया हुआ होने के कारण कोई एक आकार नियत नहीं किया जा सकता है) ।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

**47. जारिसिया सिद्धप्पा भवमल्लिय जीव तारिसा होंति ।
जरमरणजम्ममुक्का अट्ठगुणालंकिया जेण ॥**

जारिसिया[1]	(जारिसिय) 1/2 वि 'इय' स्वार्थिक	जिस तरह से
सिद्धप्पा	(सिद्धप्प) 1/2	सिद्ध आत्माएँ
भवमल्लिय	[(भवं)+(अल्लिय)]	
	भवं[2](भव) 2/1→7/1	संसार में
	अल्लिय (अल्लि) भूकृ 1/2	प्रवेश किये हुए
*जीव	(जीव) 1/2	जीव
तारिसा	(तारिस) 1/2 वि	उसी तरह से
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
जरमरणजम्ममुक्का	[(जरा→जर)[3] वि-(मरण)-(जम्म)-(मुक्क)भूकृ 1/2 अनि]	जन्म, जरा और मरण से मुक्त
अट्ठगुणालंकिया	[(अट्ठगुण)+(अलंकिया)]	
	[(अट्ठ)-(गुण)-(अलंकिय) भूकृ 1/2 अनि]	आठ गुणों से विभूषित
जेण	अव्यय	चूँकि

अन्वय- **जारिसिया सिद्धप्पा तारिसा भवमल्लिय जीव होंति जेण जरमरणजम्ममुक्का अट्ठगुणालंकिया ।**

अर्थ- जिस तरह से सिद्ध आत्माएँ (हैं) उसी तरह से संसार में प्रवेश किये हुए जीव होते हैं। चूँकि (सिद्ध) जन्म, जरा और मरण से मुक्त (हैं) (और) आठ गुणों से विभूषित (हैं) (इसलिये) (संसारी जीव भी) (अव्यक्त रूप से/द्रव्य दृष्टि से) (जन्म, जरा और मरण से मुक्त) (हैं) ।

---

1. अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृ. 424 (37)
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)
3. समास में अधिकतर प्रथम शब्द का अंतिम स्वर ह्रस्व हो तो दीर्घ हो जाता है और दीर्घ हो तो ह्रस्व हो जाता है ।
(प्राकृत-व्याकरण, पृष्ठ 21)

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है । (पिशलः प्राकृत भाषाओंका व्याकरण, पृष्ठ 517)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

48. असरीरा अविणासा अणिंदिया णिम्मला विसुद्धप्पा ।
जह लोयग्गे सिद्धा तह जीवा संसिदी णेया ॥

असरीरा	(असरीर) 1/2 वि	अशरीरी
अविणासा	(अविणास) 1/2 वि	अविनाशी
अणिंदिया	(अणिंदिय) 1/2 वि	अतीन्द्रिय
णिम्मला	(णिम्मल) 1/2 वि	निर्मल
विसुद्धप्पा	(विसुद्धप्प) 1/2 वि	विशुद्धात्मा
जह	अव्यय	जिस प्रकार
लोयग्गे	(लोयग्ग) 7/1	लोक के अग्रभाग में
सिद्धा	(सिद्ध) 1/2	सिद्ध
तह	अव्यय	उसी प्रकार
जीवा	(जीव) 1/2	जीव
संसिदी[1]	(संसिदि) 2/2→7/2	संसार चक्र में
णेया	(णेय) विधिकृ 1/2 अनि	समझे जाने चाहिये

अन्वय- जह लोयग्गे सिद्धा असरीरा अविणासा अणिंदिया णिम्मला विसुद्धप्पा तह संसिदी जीवा णेया ।

अर्थ- जिस प्रकार लोक के अग्रभाग में (स्थित) सिद्ध अशरीरी, अविनाशी, अतीन्द्रिय, निर्मल (और) विशुद्धात्मा (होते हैं) उसी प्रकार संसार चक्र में (भ्रमण करते हुए) (द्रव्य दृष्टि से) जीव समझे जाने चाहिये ।

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

49. एदे सव्वे भावा ववहारणयं पडुच्च भणिदा हु।
सव्वे सिद्धसहावा सुद्धणया संसिदी जीवा॥

एदे	(एद) 1/2 सवि	ये
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
भावा	(भाव) 1/2	भाव
ववहारणयं	(ववहारणय) 2/1	व्यवहार नय को
पडुच्च	(पडुच्च) संकृ अनि	आश्रय करके
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
हु	अव्यय	निश्चय ही
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सभी
सिद्धसहावा	[(सिद्ध)-(सहाव) 1/2 वि]	सिद्ध स्वभाववाले
सुद्धणया	(सुद्धणय) 5/1	शुद्धनय से
संसिदी[1]	(संसिदि) 2/2→7/2	संसार चक्र में
जीवा	(जीव) 1/2	जीव

अन्वय- एदे सव्वे भावा हु ववहारणयं पडुच्च भणिदा संसिदी सुद्धणया सव्वे जीवा सिद्धसहावा।

अर्थ- ये सभी भाव (विभाव पर्यायें) निश्चय ही व्यवहारनय (लौकिक दृष्टि) को आश्रय करके कहे गये हैं। संसार चक्र में शुद्धनय (शुद्ध आत्मिक दृष्टि) से सभी जीव सिद्ध स्वभाववाले (कहे गये हैं)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

50. पुव्वुत्तसयलभावा परदव्वं परसहावमिदि हेयं ।
सगदव्वमुवादेयं अंतरतच्चं हवे अप्पा ॥

पुव्वुत्तसयलभावा	[(पुव्व)+(उत्तसयलभावा)]	
	[(पुव्व) वि-(उत्त) भूकृ अनि-(सयल) वि-(भाव) 1/2]	पूर्व कथित सभी भाव (विभाव पर्यायें)
परदव्वं	(परदव्व) 1/1	परद्रव्य
परसहावमिदि	[(परसहावं)+(इदि)]	
	परसहावं (परसहाव) 1/1	परस्वभाव
	इदि (अ) = इसलिए	इसलिए
हेयं	(हेय) 1/1 वि	त्यागने योग्य
सगदव्वमुवादेयं	[(सगदव्वं)+(उवादेयं)]	
	सगदव्वं (सगदव्व) 1/1	स्वद्रव्य
	उवादेयं (उवादेय) 1/1 वि	उपादेय
अंतरतच्चं	[(अंतर)-(तच्च) 1/1]	अंतर (स्व) द्रव्य
हवे	(हव) व 3/1 अक	है
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा

अन्वय- परदव्वं परसहावमिदि हेयं पुव्वुत्तसयलभावा सगदव्वमुवादेयं अप्पा अंतरतच्चं हवे ।

अर्थ- (आगम के अनुसार) परद्रव्य (और) परस्वभाव त्यागने योग्य (हैं)। (चूँकि) पूर्व कथित सभी भाव (विभाव पर्यायें हैं) इसलिए (त्यागी जानी चाहिये)। स्व द्रव्य उपादेय (है)। आत्मा अंतर (स्व) द्रव्य है। (इसलिए अंतर (स्व) द्रव्य आत्मा ही उपादेय है)।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

51. **विवरीयाभिणिवेसविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं।**

संसयविमोहविब्भमविवज्जियं होदि सण्णाणं ॥

52. **चलमलिणमगाढत्तविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं।**

अधिगमभावो णाणं हेयोवादेयतच्चाणं ॥

विवरीयाभिणिवेस-विवज्जियसद्दहणमेव	[(विवरीय)+(अभिणिवेस-विवज्जियसद्दहणं)+(एव)]	
	[(विवरीय)वि-(अभिणिवेस)-	अशुद्ध अभिप्रायरहित
	(विवज्जिय)वि-(सद्दहण)1/1]	श्रद्धान
	एव (अ)= ही	ही
सम्मत्तं	(सम्मत्त) 1/1	सम्यक्त्व
संसयविमोहविब्भम-विवज्जियं	[(संसय)-(विमोह) वि-(विब्भम)-(विवज्जिय)1/1वि]	संशय, विमोह और विभ्रमरहित
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
सण्णाणं	(सण्णाण) 1/1	सम्यग्ज्ञान
चलमलिणमगाढत्त-विवज्जियसद्दहणमेव	[(चलमलिणं)+(अगाढत्त-विवज्जियसद्दहणं)+(एव)]	
	चलमलिणं [(चल)-(मलिण) 1/1]	क्षोभ और दोष
	अगाढत्तविवज्जियसद्दहणं	

	[(अगाढत्त)-(विवज्जिय)-	अदृढ़ता-रहित श्रद्धान
	(सद्दहण) 1/1]	
	एव (अ)= ही	ही
सम्मत्तं	(सम्मत्त) 1/1	सम्यक्त्व
अधिगमभावो	(अधिगमभाव) 1/1	ठीक-ठीक बोध होना
णाणं	(णाण) 1/1	सम्यग्ज्ञान
हेयोवादेयतच्चाणं	[(हेय)+(उवादेयतच्चाणं)]	
	[(हेय)-(उवादेय)-	हेय और उपादेय
	(तच्च) 6/2]	तत्त्वों का

अन्वय- विवरीयाभिणिवेसविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं संसयविमोह-विब्भमविवज्जियं सण्णाणं होदि चलमलिणमगाढत्तविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं हेयोवादेयतच्चाणं अधिगमभावो णाणं।

अर्थ- (पूर्व कथित गाथा के अनुसार चूँकि आत्मा उपादेय है) (इसलिए) अशुद्ध अभिप्रायरहित अर्थात् विभावरहित (आत्मा का) श्रद्धान ही सम्यक्त्व (सम्यग्दर्शन) (है) (तथा) संशय (संदेह), विमोह (अस्पष्टता) और विभ्रम (विपरीत ग्रहण) रहित (ज्ञान) सम्यग्ज्ञान होता है। (आत्मा का) क्षोभ, दोष[1] और अदृढ़ता-रहित श्रद्धान ही सम्यक्त्व (है) (तथा) हेय और उपादेय तत्त्वों का ठीक-ठीक बोध होना सम्यगज्ञान (है) ।

---

1. सम्यग्दर्शन के आठ दोषः (1) शंका (2) कांक्षा (3) विचिकित्सा (4) मूढ़दृष्टि (5) अनुपगूहन (6) अस्थितिकरण (7) अवात्सल्य (8) अप्रभावना ।

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

53. **सम्मत्तस्स णिमित्तं जिणसुत्तं तस्स जाणया पुरिसा।**
अंतरहेऊ भणिदा दंसणमोहस्स खयपहुदी॥

सम्मत्तस्स	(सम्मत्त) 6/1	सम्यक्त्व का
णिमित्तं	(णिमित्त) 1/1	निमित्त
जिणसुत्तं	(जिणसुत्त) 1/1	जिनसूत्र
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
जाणया	(जाणय) 1/2 वि	समझानेवाले
पुरिसा	(पुरिस) 1/2	मनुष्य
अंतरहेऊ	[(अंतर) वि-(हेउ) 1/2]	अंतरंग निमित्त
भणिदा	(भण) भूकृ 1/2	कहे गये
दंसणमोहस्स	[(दंसण)-(मोह) 6/1]	दर्शनमोह के
खयपहुदी	[(खय)-(पहुदि) 1/2 वि]	क्षय आदि

अन्वय- सम्मत्तस्स णिमित्तं जिणसुत्तं तस्स जाणया पुरिसा अंतरहेऊ दंसणमोहस्स खयपहुदी भणिदा।

अर्थ- सम्यक्त्व का (बाह्य) निमित्त जिनसूत्र (होता है) (तथा) उस (जिनसूत्र) के समझानेवाले मनुष्य (भी) (बाह्य निमित्त) (कहे गये हैं) (किन्तु) अंतरंग निमित्त दर्शनमोह के क्षय आदि कहे गये (हैं)।

नोटः **सपादक द्वारा अनूदित**
अर्थ परम्परा से भिन्न किया गया है।

54. **सम्मत्तं सण्णाणं विज्जदि मोक्खस्स होदि सुण चरणं।**
ववहारणिच्छएण दु तम्हा चरणं पवक्खामि ॥

सम्मत्तं	(सम्मत्त) 1/1	सम्यक्त्व
सण्णाणं	(सण्णाण) 1/1	सम्यग्ज्ञान
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	होता है
मोक्खस्स	(मोक्ख) 6/1	मोक्ष का
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
सुण	(सुण) विधि 2/1 सक	सुनो
चरणं	(चरण) 1/1	सम्यक्चारित्र
ववहारणिच्छएण	[(ववहार)-(णिच्छय) 3/1]	व्यवहार और निश्चय से
दु	अव्यय	तथा
तम्हा	अव्यय	इसलिए
चरणं	(चरण) 2/1	सम्यक्चारित्र को
पवक्खामि	(पवक्ख) भवि 1/1 सक	कहूँगा

अन्वय- मोक्खस्स सम्मत्तं सण्णाणं विज्जदि दु चरणं होदि तम्हा ववहारणिच्छएण चरणं पवक्खामि सुण।

अर्थ- मोक्ष का (कारण) सम्यक्त्व (सम्यग्दर्शन) और सम्यग्ज्ञान होता है तथा सम्यक्चारित्र (भी) होता है। इसलिए (मैं) व्यवहार (लोक दृष्टि) और निश्चय (आत्मिक दृष्टि) से सम्यक्चारित्र को कहूँगा। (तुम) सुनो।

नोटः अर्थ परम्परा से भिन्न किया गया है।

55. ववहारणयचरित्ते ववहारणयस्स होदि तवचरणं।
णिच्छयणयचारित्ते तवचरणं होदि णिच्छयदो ॥

ववहारणयचरित्ते	[(ववहारणय)-(चरित्त) 7/1]	व्यवहारनय के चारित्र में
ववहारणयस्स[1]	[(ववहारणय) 6/1→5/1]	व्यवहारनय से
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
तवचरणं	[(तव)-(चरण) 1/1]	तप का आचरण
णिच्छयणयचारित्ते	[(णिच्छयणय)-(चारित्त) 7/1]	निश्चयनय के चारित्र में
तवचरणं	[(तव)-(चरण) 1/1]	तप का आचरण
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
णिच्छयदो[2]	(णिच्छय) 5/1	निश्चयनय से

अन्वय- ववहारणयचरित्ते ववहारणयस्स तवचरणं होदि णिच्छयणय-चारित्ते णिच्छयदो तवचरणं होदि।

अर्थ- व्यवहारनय के चारित्र में व्यवहारनय (लोकदृष्टि) से तप का आचरण होता है (और) निश्चयनय के चारित्र में निश्चयनय (आत्मदृष्टि) से तप का आचरण होता है।

1. कभी-कभी पंचमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
2. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'णिच्छयादो' के स्थान पर 'णिच्छयदो' किया गया है।

व्यवहारचारित्र अधिकार

(गाथा 56 से गाथा 76 तक)

56. कुलजोणिजीवमग्गणठाणाइसु जाणिऊण जीवाणं ।
तस्सारंभणियत्तणपरिणामो होइ पढमवदं ॥

कुलजोणिजीवमग्गण-ठाणाइसु	[(कुलजोणिजीवमग्गणठाण)+(आइसु)]	
	[(कुल)-(जोणि)-(जीव)-(मग्गणठाण)-(आइ) 7/2]	कुल, योनि, जीवस्थान और मार्गणास्थान आदि में
जाणिऊण	(जाण) संकृ	जानकर
जीवाणं[1]	(जीव) 6/2→2/2	जीवों को
तस्सारंभणियत्तण-परिणामो	[(तस्स)+(आरंभणियत्तण-परिणामो)]	
	तस्स (त) 6/1 सवि	उसका
	आरंभणियत्तणपरिणामो [(आरंभ)-(णियत्तण)-(परिणाम) 1/1]	हिंसा-त्यागने का भाव
होइ	(हो) व 3/1 अक	होता है
पढमवदं	[(पढम) वि-(वद) 1/1]	पहला व्रत

अन्वय- कुलजोणिजीवमग्गणठाणाइसु जीवाणं जाणिऊण तस्सारंभणियत्तणपरिणामो पढमवदं होइ ।

अर्थ- कुल, योनि, जीवस्थान और मार्गणास्थान आदि में (एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक) जीवों को जानकर (जो साधु इस लोक में हिंसा को त्यागते हैं) उस (साधु) का हिंसा-त्यागने का भाव पहला (अहिंसा) व्रत होता है ।

---

1. कभी-कभी द्वितीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है । (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

नोटः विस्तार के लिए देखें, गोम्मटसार टीका

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

57. रागेण व दोसेण व मोहेण व मोसभासपरिणामं ।
जो पजहदि साहु सया विदियवदं होइ तस्सेव ॥

रागेण	(राग) 3/1	राग से
व	अव्यय	अथवा
दोसेण	(दोस) 3/1	द्वेष से
व	अव्यय	अथवा
मोहेण	(मोह) 3/1	मोह से
व	अव्यय	पुनरावृत्ति भाषा की पद्धति
मोसभासपरिणामं	[(मोस)-(भासा→भास)[1]-(परिणाम) 2/1]	असत्य भाषा के भाव को
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
पजहदि	(पजह) व 3/1 सक	छोड़ता है
*साहु	(साहु) 1/1	साधु
सया	अव्यय	सदा
विदियवदं	[(विदिय) वि-(वद) 1/1]	दूसरा व्रत
होइ	(हो) व 3/1 अक	होता है
तस्सेव	[(तस्स)+(एव)]	
	तस्स (त) 6/1 सवि	उसके
	एव (अ)= ही	ही

अन्वय- रागेण व दोसेण व मोहेण व मोसभासपरिणामं जो साहु सया पजहदि तस्सेव विदियवदं होइ ।

अर्थ- राग से अथवा द्वेष से अथवा मोह से (उत्पन्न) असत्य भाषा के भाव को जो साधु सदा छोड़ता है उस (साधु) के ही दूसरा (सत्य) व्रत होता है।

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'भासा' का 'भास' किया गया है ।

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है । (पिशलः प्राकृत भाषाओंका व्याकरण, पृष्ठ 517)

58. गामे वा णयरे वाऽ[1]रण्णे वा पेच्छिऊण परमत्थं ।
जो मुयदि गहणभावं तिदियवदं होदि तस्सेव ।।

गामे	(गाम) 7/1	गाँव में
वा	अव्यय	अथवा
णयरे	(णयर) 7/1	नगर में
वा	अव्यय	अथवा
रण्णे	(रण्ण) 7/1	वन में
वा	अव्यय	पुनरावृत्ति भाषा की पद्धति
पेच्छिऊण	(पेच्छ) संकृ	देखकर
परमत्थं	[(परं)+(अत्थं)]	
	परं (पर) 2/1 वि	उत्कृष्ट
	अत्थं (अत्थ) 2/1	वस्तु को
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
मुयदि	(मुय) व 3/1 सक	छोड़ता है
गहणभावं	[(गहण)-(भाव) 2/1]	ले लेने के भाव को
तिदियवदं	[(तिदिय)-(वद) 1/1]	तीसरा व्रत
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
तस्सेव	[(तस्स)+(एव)]	
	तस्स (त) 6/1 सवि	उसके
	एव (अ)= ही	ही

अन्वय- गामे वा णयरे वाऽरण्णे वा जो परमत्थं पेच्छिऊण गहणभावं मुयदि तस्सेव तिदियवदं होदि ।

अर्थ- ग्राम में अथवा नगर में अथवा वन में उत्कृष्ट वस्तु को देखकर जो (साधु) (उसके) ले लेने (ग्रहण करने) के भाव को छोड़ता है उस (साधु) के ही तीसरा (अचौर्य) व्रत होता है ।

---

1. 'ऽ' यह लोप का चिह्न है ।

59. दट्ठूण इत्थिरूवं वांछाभावं णियत्तदे तासु।
मेहुणसण्णविवज्जियपरिणामो अहव तुरीयवदं[1]।।

दट्ठूण	(दट्ठूण) संकृ अनि	देखकर
इत्थिरूवं	[(इत्थी→इत्थि)-(रूव) 2/1]	स्त्रियों के रूप को
वांछाभावं	[(वांछा)[2]-(भाव)[3] 2/1→1/1]	चाह-भाव
णियत्तदे	(णियत्त) व 3/1 अक	रुकता है
तासु	(ता) 7/2 सवि	उनके प्रति
मेहुणसण्णविवज्जिय-परिणामो	[(मेहुण)-(सण्णा→सण्ण)-(विवज्जिय)वि-(परिणाम)1/1]	मैथुन संज्ञारहित भाव
अहव	अव्यय	अथवा
तुरीयवदं	[(तुरीय) वि-(वद) 1/1]	चौथा व्रत

अन्वय- इत्थिरूवं दट्ठूण वांछाभावं णिअत्तदे अहव तासु मेहुणसण्ण-विवज्जियपरिणामो तुरीयवदं ।

अर्थ- स्त्रियों के रूप को देखकर (जिस साधु का) (कामातुर) चाह-भाव (स्वाभाविक रूप से) रुकता है अर्थात् उत्पन्न नहीं होता है अथवा (जिस साधु का) उनके प्रति मैथुन संज्ञा (भोगासक्ति) रहित भाव (सदैव बना रहता है) (तो) (उस साधु के) चौथा (ब्रह्मचर्य) व्रत (होता है) ।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति के लिए 'तुरीयवदं' के स्थान पर 'तुरियवदं' होना चाहिए।
2. यहाँ पर संस्कृत शब्द वांछा का प्रयोग किया गया है। प्राकृत रूप वंछा है ।
3. प्रथमा विभक्ति के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है ।
   (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137 वृत्ति)

नोटः संपादक द्वारा अनूदित

60. सव्वेसिं गंथाणं चागो णिरवेक्खभावणापुव्वं।
पंचमवदमिदि भणिदं चारित्तभरं वहंतस्स॥

सव्वेसिं	(सव्व) 6/2 सवि	समस्त
गंथाणं	(गंथ) 6/2	परिग्रहों का
चागो	(चाग) 1/1	त्याग
णिरवेक्खभावणापुव्वं	[(णिरवेक्ख) वि-(भावणा)-(पुव्व) 1/1 वि]	अपेक्षारहित चिंतन से युक्त
पंचमवदमिदि	[(पंचमवदं)+(इदि)]	
	पंचमवदं [(पंचम) वि-(वद) 1/1]	पाँचवा व्रत
	इदि (अ)=	पादपूरक
भणिदं	(भण) भूकृ 1/1	कहा गया
चारित्तभरं	[(चारित्त)-(भर) 2/1]	चारित्र के अतिशय को
वहंतस्स	(वह) वकृ 4/1	धारण करते हुए के लिए

अन्वय- चारित्तभरं वहंतस्स सव्वेसिं गंथाणं णिरवेक्खभावणापुव्वं चागो पंचमवदमिदि भणिदं।

अर्थ- (किसी भी प्रकार के) चारित्र के अतिशय को धारण करते हुए (साधु) के लिए समस्त परिग्रहों का अपेक्षारहित चिंतन से युक्त त्याग पाँचवा (अपरिग्रह) व्रत कहा गया (है)।

61. पासुगमग्गेण दिवा अवलोगंतो जुगप्पमाणं हि।
गच्छइ पुरदो समणो इरियासमिदी हवे तस्स ॥

पासुगमग्गेण[1]	[(पासुग) वि-(मग्ग) 3/1]	प्रासुक मार्ग पर
दिवा	अव्यय	दिन में
अवलोगंतो	(अवलोग) वकृ 1/1	देखता हुआ
जुगप्पमाणं	[(जुग)-(प्पमाण) 2/1]	चार हाथ परिमाण को
हि	अव्यय	निश्चय ही
गच्छइ	(गच्छ) व 3/1 सक	गमन करता है
पुरदो	अव्यय	आगे
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
इरियासमिदी	[(इरिया)-(समिदि) 1/1]	ईर्या समिति
हवे	(हव) व 3/1 अक	होती है
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके

अन्वय- पासुगमग्गेण दिवा जुगप्पमाणं पुरदो अवलोगंतो समणो गच्छइ तस्स हि इरियासमिदी हवे।

अर्थ- प्रासुक (जन्तुरहित) मार्ग पर दिन में चार हाथ परिमाण को आगे देखता हुआ (जो) श्रमण गमन करता है उस (श्रमण) के निश्चय ही ईर्या समिति होती है।

---

1. मार्गवाचक शब्दों में तृतीया होती है।
(प्राकृत-व्याकरणः पृ 36)

62. पेसुण्णहासकक्कसपरणिंदप्पप्पसंसियं वयणं।
परिचत्ता सपरहिदं भासासमिदी वदंतस्स॥

पेसुण्णहासकक्कस-परणिंदप्पप्पसंसियं	[(पेसुण्णहासकक्कसपरणिंद)+(अप्पप्पसंसियं)]	
	[(पेसुण्ण)-(हास) वि-(कक्कस) वि-(पर) वि-(णिंदा→णिंद)-(अप्प)-(प्पसंस) भूकृ 2/1]	पैशुन्य (चुगली), मजाक/मखौल, कटुवचन, परनिंदा और अपनी प्रशंसा किये गये
वयणं	(वयण) 2/1	वचन को
परिचत्ता	(परिचत्ता) संकृ अनि	छोड़कर
सपरहिदं	[(स-पर) वि-(हिद) भूकृ 2/1 अनि]	स्व-पर हितकारी
भासासमिदी	[(भासा)-(समिदि) 1/1]	भाषासमिति
वदंतस्स	(वद) वकृ 6/1	बोलते हुए के

अन्वय- **पेसुण्णहासकक्कसपरणिंदप्पप्पसंसियं वयणं परिचत्ता सपरहिदं वदंतस्स भासासमिदी।**

अर्थ- पैशुन्य (चुगली), मजाक/मखौल, कटुवचन, परनिन्दा (और) अपनी प्रशंसा किये गये वचन को छोड़कर स्व-पर हितकारी (वचन को) बोलते हुए (साधु) के भाषासमिति (होती है)।

63. कदकारिदाणुमोदणरहिदं तह पासुगं पसत्थं च ।
दिण्णं परेण भत्तं समभुत्ती एसणासमिदी ॥

कदकारिदाणुमोदण-रहिदं[1]	[(कदकारिद)+ (अणुमोदणरहियं)] [(कद) भूकृ अनि- (कर(प्रे.)→कार→कारिद)भूकृ- (अणुमोदण)-(रहिद) भूकृ 1/1 अनि]	कृत कारित और अनुमोदना के बिना
तह	अव्यय	तथा
पासुगं	(पासुग) 1/1 वि	प्रासुक
पसत्थं	(पसत्थ) 1/1 वि	प्रशस्त
च	अव्यय	और
दिण्णं	(दिण्ण) भूकृ 1/1 अनि	दिया गया
परेण	(पर) 3/1 वि	दूसरे के द्वारा
भत्तं	(भत्त) 1/1	आहार
समभुत्ती	[(सम) वि-(भुत्ति) 1/1]	समभाव से आहार
एषणासमिदी	[(एषणा)-(समिदि) 1/1]	एषणासमिति

अन्वय- कदकारिदाणुमोदणरहिदं भत्तं पासुगं च पसत्थं तह परेण दिण्णं समभुत्ती एसणासमिदी ।

अर्थ- (साधु का आहार) कृत (स्वयं द्वारा निर्मित/उत्पादित), कारित (दूसरे के द्वारा बनवाया हुआ) तथा अनुमोदना (स्वयं की सहमति) के बिना (होता है)। (वह) आहार प्रासुक और प्रशस्त तथा दूसरे के द्वारा दिया गया (होता है)। (इस तरह साधु द्वारा) समभाव से आहार (ग्रहण करना) एषणासमिति (कही जाती है) ।

---

1. समास के अन्त में रहित का अर्थ 'के बिना' होता है ।

64. पोत्थइकमंडलाइं गहणविसग्गेसु पयतपरिणामो ।
आदावणणिक्खेवणसमिदी होदि त्ति णिद्दिट्ठा ।।

पोत्थइकमंडलाइं	[(पोत्थइकमंडल)+(आइं)]	
	[(पोत्थइ)-(कमंडल)-(आइ) 2/1]	पुस्तक, कमंडल आदि को
गहणविसग्गेसु	[(गहण)-(विसग्ग) 7/2]	ले लेने और छोड़ने में
पयतपरिणामो	[(पयत) वि-(परिणाम) 1/1]	बड़ी सावधानी का भाव
आदावणणिक्खेवण-समिदी	[(आदावणणिक्खेवण)-(समिदि) 1/1]	आदाननिक्षेपणसमिति
होदि त्ति	[(होदि)+(इति)]	
	होदि (हो) व 3/1 अक	होता है
	इति (अ) = पादपूरक	पादपूरक
णिद्दिट्ठा	(णिद्दिट्ठा) भूकृ 1/1 अनि	कही गई

अन्वय- पोत्थइकमंडलाइं गहणविसग्गेसु पयतपरिणामो होदि त्ति आदावणणिक्खेवणसमिदी णिद्दिट्ठा ।

अर्थ- (साधु) पुस्तक, कमंडल आदि को (रखता है)। (उन वस्तुओं को) ले लेने (ग्रहण करने) और छोड़ने (धरने) में (उस साधु के) बड़ी सावधानी का भाव होता है। (इसलिए)(उस साधु के) आदाननिक्षेपणसमिति कही गई (है)।

65. पासुगभूमिपदेसे गूढे रहिए परोपरोहेण ।
उच्चारादिच्चागो पइट्ठासमिदी हवे तस्स ॥

पासुगभूमिपदेसे	[(पासुग) वि-(भूमि)-(पदेस) 7/1]	प्रासुक भूमिप्रदेश में
गूढे	(गूढ) 7/1 वि	प्रच्छन्न
रहिए	(रहिअ) 7/1 वि	रहित
परोपरोहेण	[(पर)+(उपरोहेण)] [(पर) वि-(उपरोह) 3/1]	पर के लिए बाधा से
उच्चारादिच्चागो	[(उच्चार)+(आदिच्चागो)] [(उच्चार)-(आदि)-(च्चाग) 1/1]	मलोत्सर्ग आदि का त्याग
पइट्ठासमिदी	[(पइट्ठा)-(समिदि) 1/1]	प्रतिष्ठापनसमिति
हवे	(हव) व 3/1 अक	होती है
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके

अन्वय- परोपरोहेण रहिए गूढे पासुगभूमिपदेसे उच्चारादिच्चागो तस्स पइट्ठासमिदी हवे ।

अर्थ- (जिस साधु का) पर के लिए बाधा से रहित, प्रच्छन्न (तथा) प्रासुक भूमिप्रदेश में मलोत्सर्ग (मल-मूत्र) आदि का त्याग (होता है) उस (साधु) के प्रतिष्ठापनसमिति होती है ।

66. कालुस्समोहसण्णारागद्दोसाइअसुहभावाणं ।

परिहारो मणुगुत्ती ववहारणयेण परिकहियं ।।

कालुस्समोहसण्णा-रागद्दोसाइअसुह-भावाणं	[(कालुस्समोहसण्णा-रागद्दोस)+(आइअसुह-भावाणं)]	
	[(कालुस्स)-(मोह)-(सण्णा)-(राग)-(द्दोस)-(आइ)-(असुह)-(भाव) 6/2]	कलुषता, मोह, संज्ञा, राग, द्वेष आदि अशुभ भावों का
परिहारो	(परिहार) 1/1	परिहार
मणुगुत्ती	(मणुगुत्ति) 1/1	मनोगुप्ति
ववहारणयेण	(ववहारणय) 3/1	व्यवहार नय से
परिकहियं	(परिकह) भूकृ 1/1	कहा गया

अन्वय- कालुस्समोहसण्णारागद्दोसाइअसुहभावाणं परिहारो मणुगुत्ती ववहारणयेण परिकहियं ।

अर्थ- कलुषता, मोह, संज्ञा, राग, द्वेष आदि अशुभ भावों का परिहार मनोगुप्ति (है) । व्यवहार नय से (यह) कहा गया (है) ।

67. **थीराजचोरभत्तकहादिवयणस्स पावहेउस्स।**
परिहारो वयगुत्ती अलियादिणियत्तिवयणं वा ॥

थीराजचोरभत्त-कहादिवयणस्स	[(थी)-(राज)-(चोर)-(भत्त)-(कहा)-(आदि)-(वयण) 6/1]	स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, भोजनकथा आदि के कहने की क्रिया का
पावहेउस्स[1]	[(पाव)-(हेउ) 6/1]	पाप के कारण का
परिहारो	(परिहार) 1/1	त्याग
वयगुत्ती	(वयगुत्ति) 1/1	वचनगुप्ति
अलियादिणियत्ति-वयणं	[(अलिय)+(आदिणियत्ति-वयण)]	
	[(अलिय)-(आदि)-(णियत्ति)-(वयण) 1/1]	असत्य आदि के त्यागवाले वचन
वा	अव्यय	भी

अन्वय- पावहेउस्स थीराजचोरभत्तकहादिवयणस्स परिहारो वयगुत्ती अलियादिणियत्तिवयणं वा।

अर्थ- (जो) पाप का कारण (है) (उस) स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, भोजनकथा आदि के कहने की क्रिया का त्याग वचनगुप्ति (है) (तथा) असत्य आदि के त्यागवाले वचन भी (वचनगुप्ति है)।

---

1. 'कारण' अर्थ में 'हेउ' षष्ठी में रखा जाता है।
(प्राकृत-व्याकरणः पृष्ठ 46)

68. **बंधणछेदणमारणआकुंचण तह पसारणादीया।**
कायकिरियाणियत्ती णिद्दिट्ठा कायगुत्ति त्ति ॥

बंधणछेदणमारण-	[(बंधण)-(छेदण)-(मारण)-	बंधन, छेदन, मारण
आकुंचण	(आकुंचण) 1/1]	संकोचन
तह	अव्यय	तथा
पसारणादीया	[(पसारण)-(आदिय→	प्रसारण आदि
	आदीय) 1/2]	
	'य' स्वार्थिक	
कायकिरियाणियत्ती	[(काय)-(किरिया)-	शरीर की क्रियाओं का
	(णियत्ति) 1/1]	त्याग
णिद्दिट्ठा	(णिद्दिट्ठा) भूकृ 1/1 अनि	कही गई
कायगुत्ति त्ति	[(कायगुत्ती)+(इति)]	
	कायगुत्ती (कायगुत्ति) 1/1	कायगुप्ति
	इति (अ) = पादपूरक	पादपूरक

अन्वय- बंधणछेदणमारणआकुंचण तह पसारणादीया कायकिरिया-णियत्ती कायगुत्ति त्ति णिद्दिट्ठा।

अर्थ- (पर)- बंधन, छेदन, मारण (तथा) (समुद्घात में) संकोचन तथा प्रसारण आदि शरीर की क्रियाओं का त्याग कायगुप्ति कही गई (है)।

69. जा रायादिणियत्ती मणस्स जाणीहि तं मणोगुत्ती।
अलियादिणियत्तिं वा मोणं वा होइ वइगुत्ती॥

जा	(जा) 1/1 सवि	जो
रायादिणियत्ती	[(राय)-(आदि)-(णियत्ति) 1/1]	राग आदि का त्याग
मणस्स[1]	(मण) 6/1→5/1	मन से
जाणीहि[2]	(जाण) विधि 2/1 सक	जानो
तं	(ता) 2/1 सवि	उसको
मणोगुत्ती	(मणोगुत्ति) 1/1	मनोगुप्ति
अलियादिणियत्तिं	[(अलिय)+(आदिणियत्तिं)]	
	[(अलिय)-(आदि)-(णियत्ति) 2/1]	असत्य आदि के त्याग को
वा	अव्यय	अथवा
मोणं	(मोण) 2/1	वाणी के संयम को
वा	अव्यय	भी
होइ	(हो) व 3/1 अक	है
वइगुत्ती	[(वइ)-(गुत्ति) 1/1]	वचनगुप्ति

अन्वय- मणस्स जा रायादिणियत्ती तं जाणीहि मणो गुत्ती अलियादिणियत्तिं वा मोणं वा वइगुत्ती होइ।

अर्थ- मन से जो रागादि का त्याग (है) उसको (तुम) जानो (कि) (वह) मनोगुप्ति (है)। असत्यादि का त्याग अथवा वाणी के संयमको भी (तुम जानो) (कि) (वह) वचनगुप्ति है।

---

1. कभी-कभी पंचमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
2. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पिशल, पृष्ठ-691

70. कायकिरियाणियत्ती काउस्सग्गो सरीरगे गुत्ती ।
हिंसाइणियत्ती वा सरीरगुत्ति त्ति णिद्दिट्ठा ।।

कायकिरियाणियत्ती	[(काय)-(किरिया)- (णियत्ति) 1/1]	काय की क्रियाओं का त्याग
काउस्सगो	(काउस्सग) 1/1	कायोत्सर्ग
सरीरगे	(सरीरग) 7/1 'ग' स्वार्थिक	काय में
गुत्ती	(गुत्ति) 1/1	संयम
हिंसाइणियत्ती	[(हिंसा)+(आइणियत्ती)] [(हिंसा)-(आइ)- (णियत्ति) 1/1]	 हिंसा आदि का त्याग
वा	अव्यय	अथवा
सरीरगुत्ति त्ति	[(सरीरगुत्ती)+(इति)] सरीरगुत्ती (सरीरगुत्ति) 1/1 इति (अ) = पादपूरक	 कायगुप्ति पादपूरक
णिद्दिट्ठा	(णिद्दिट्ठा) भूकृ 1/1 अनि	कही गई

अन्वय- **कायकिरियाणियत्ती काउस्सग्गो सरीरगे गुत्ती वा हिंसाइ-णियत्ती सरीरगुत्ति त्ति णिद्दिट्ठा ।**

अर्थ- काय की क्रियाओं का त्याग कायोत्सर्ग (है) (यह) काय में संयम (कहा जाता है) अर्थात् कायगुप्ति है अथवा हिंसा आदि का त्याग (भी) कायगुप्ति कही गई (है) ।

71. घणघाइकम्मरहिया केवलणाणाइपरमगुणसहिया।
चोत्तिसअदिसयजुत्ता अरिहंता एरिसा होंति॥

घणघाइकम्मरहिया	[(घण) वि-(घाइकम्म)[1]-(रहिय) 1/2 वि]	प्रगाढ़ घातिया-कर्मों से रहित
केवलणाणाइपरम-गुणसहिया	[(केवलणाण)+(आइपरमगुणसहिया)]	
	[(केवलणाण)-(आइ)-(परम) वि-(गुण)[2]-(सहिय) 1/2 वि]	केवलज्ञान आदि सर्वोत्तम गुणों से युक्त
चोत्तिसअदिसयजुत्ता	[(चोत्तिस)-(अदिसय)[3]-(जुत्त) 1/2 वि]	चौंतीस अतिशयसहित
अरिहंता	(अरिहंत) 1/2	अरहंत
एरिसा	(एरिस) 1/2 वि	ऐसे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय- अरिहंता एरिसा होंति घणघाइकम्मरहिया केवलणाणाइ-परमगुणसहिया चोत्तिसअदिसयजुत्ता।

अर्थ- अरहंत ऐसे होते हैंः (जो) (चार) प्रगाढ़ घातिया-कर्मों से रहित, केवलज्ञान आदि सर्वोत्तम-गुणों से युक्त तथा चौंतीस अतिशयसहित।

1. घातिया-कर्मः (1) ज्ञानावरणीय (2) दर्शनावरणीय (3) अन्तराय (4) मोहनीय।
2. सर्वोत्तम-गुणः (1) केवलज्ञान (2) केवलदर्शन (3) केवलसुख (4) केवलशक्ति।
3. अतिशयः (1) जन्म के दस अतिशय (2) केवलज्ञान के दस अतिशय (3) देवकृत चौदह अतिशय।
   विस्तार के लिए देखेंः तिलोयपण्णतिः 4/896-914

72. णट्ठट्ठकम्मबंधा अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा।
लोयग्गठिदा णिच्चा सिद्धा ते एरिसा होंति ॥

णट्ठट्ठकम्मबंधा	[(णट्ठ) भूकृ अनि-(अट्ठ)-(कम्मबंध) 1/2]	आठ कर्मबंध नष्ट कर दिये गये
अट्ठमहागुणसमण्णिया	[(अट्ठ)-(महागुण)[1]-(समण्णिय) भूकृ 1/2 अनि]	आठ महागुणों से समन्वित/युक्त
परमा	(परम) 1/2 वि	सर्वोपरि
लोयग्गठिदा	[(लोयग्ग)-(ठिद) भूकृ 1/2]	लोक के अग्रभाग में स्थित
णिच्चा	(णिच्च) 1/2 वि	शाश्वत
सिद्धा	(सिद्ध) 1/2	सिद्ध
ते	(त) 1/2 सवि	वे
एरिसा	(एरिस) 1/2 वि	ऐसे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय- ते सिद्धा एरिसा होंति अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा लोयग्गठिदा णिच्चा णट्ठट्ठकम्मबंधा।

अर्थ- वे सिद्ध ऐसे होते हैं: आठ महागुणों से समन्वित/युक्त, सर्वोपरि लोक के अग्रभाग में स्थित, शाश्वत (तथा) (जिनके द्वारा) आठ कर्मबंध नष्ट कर दिये गये (हैं)।

---

1. सिद्धों के आठ गुणः (1) अनंतज्ञान (2) अनंतदर्शन (3) अनंतसुख (4) अनंतवीर्य (5) सूक्ष्मत्व गुण (6) अवगाहनत्व (7) अगुरुलघुत्व (8) अव्याबाधत्व।

73. पंचाचारसमग्गा पंचिंदियदंतिदप्पणिद्दलणा ।
धीरा गुणगंभीरा आयरिया एरिसा होंति ॥

पंचाचारसमग्गा	[(पंच) वि-(आचार)[1] (समग्ग) 1/2 वि]	पाँच आचारों से युक्त
पंचिंदियदंतिदप्प-णिद्दलणा	[(पंच)+(इंदियदंतिदप्प-णिद्दलणा)]	
	[(पंच) वि-(इंदिय)-(दंति)-(दप्प)-(णिद्दलण) 1/2 वि]	पाँच इन्द्रियोंरूपी हाथी के मद का मर्दन करनेवाले
धीरा	(धीर) 1/2 वि	धैर्यवान
गुणगंभीरा	[(गुण)-(गंभीर) 1/2 वि]	गुणों में गंभीर
आयरिया	(आयरिय) 1/2	आचार्य
एरिसा	(एरिस) 1/2 वि	ऐसे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय- आयरिया एरिसा होंति पंचाचारसमग्गा पंचिंदियदंति-दप्पणिद्दलणा धीरा गुणगंभीरा ।

अर्थ- आचार्य ऐसे होते हैंः पाँच आचारों से युक्त, पाँच इन्द्रियोंरूपी हाथी के मद का मर्दन करनेवाले, धैर्यवान (और) गुणों में गंभीर ।

---

1. पाँच आचारः (1) ज्ञानाचार (2) दर्शनाचार (3) चारित्राचार (4) तपाचार (5) वीर्याचार।

74. **रयणत्तयसंजुत्ता जिणकहियपयत्थदेसया सूरा।**

णिक्कंखभावसहिया उवज्झाया एरिसा होंति ॥

रयणत्तयसंजुत्ता	[(रयणत्तय)-(संजुत्त)1/2 वि]	रत्नत्रय से युक्त
जिणकहियपयत्थ-देसया	[(जिण)-(कहिय) भूकृ (पयत्थ)-(देसय) 1/2 वि]	जिनेन्द्रदेव द्वारा कहे गये पदार्थों के उपदेशक
सूरा	(सूर) 1/2 वि	वीर
णिक्कंखभावसहिया	[(णिक्कंख)-(भाव)-(सहिय) 1/2 वि]	इच्छा-रहित भावों से युक्त
उवज्झाया	(उवज्झाय) 1/2	उपाध्याय
एरिसा	(एरिस) 1/2 वि	ऐसे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय-उवज्झाया एरिसा होंति रयणत्तयसंजुत्ता जिणकहियपयत्थ-देसया सूरा णिक्कंखभावसहिया ।

अर्थ- उपाध्याय ऐसे होते हैं: रत्नत्रय से युक्त, जिनेन्द्रदेव द्वारा कहे गये पदार्थों के उपदेशक, वीर (और) इच्छा-रहित भावों से युक्त।

75. वावारविप्पमुक्का चउव्विहाराहणासयारत्ता ।
णिग्गंथा णिम्मोहा साहू दे एरिसा होंति ॥

वावारविप्पमुक्का	[(वावार)-(विप्पमुक्क) भूकृ 1/2 अनि]	व्यवसाय से छुटकारा पाए हुए
चउव्विहाराहणा-सयारत्ता	[(चउव्विह)+(आराहणा-सयारत्ता)]	
	[(चउ) वि-(व्विह)-(आरहणा)-(सया) अ-(रत्त) भूकृ 1/2 अनि]	चार प्रकार की आराधनाओं में सदा लगे हुए
णिग्गंथा	(णिग्गंथ) 1/2 वि	निर्ग्रंथ
णिम्मोहा	(णिम्मोह) 1/2 वि	मोह-रहित
साहू	(साहु) 1/2	साधु
दे	(द→त) 1/2 सवि	वे
एरिसा	(एरिस) 1/2 वि	ऐसे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं

अन्वय- दे एरिसा साहू होंति वावारविप्पमुक्का चउव्विहाराहणा-सयारत्ता णिग्गंथा णिम्मोहा ।

अर्थ- वे साधु ऐसे होते हैं: व्यवसाय से छुटकारा पाए हुए, चार प्रकार की (ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप) आराधनाओं में सदा लगे हुए, निर्ग्रंथ और मोह-रहित ।

76. एरिसयभावणाए ववहारणयस्स होदि चारित्तं।

णिच्छयणयस्स चरणं एत्तो उड्ढं पवक्खामि ॥

एरिसयभावणाए	[(एरिसय) वि-(भावणा)7/1] 'य' स्वार्थिक	ऐसी भावना होने पर
ववहारणयस्स	(ववहारणय) 6/1	व्यवहारनय का
होदि	(हो) व 3/1 अक	होता है
चारित्तं	(चारित्त) 1/1	चारित्र
णिच्छयणयस्स	(णिच्छयणय) 6/1	निश्चयनय के
चरणं	(चरण) 2/1	चारित्र को
एत्तो[1]	(एत) 5/1 सवि	इससे (इसके)
उड्ढं[1]	अव्यय	बाद में
पवक्खामि	(पवक्ख) भवि 1/1 सक	कहूँगा

अन्वय- एरिसयभावणाए ववहारणयस्स चारित्तं होदि एत्तो उड्ढं णिच्छयणयस्सचरणं पवक्खामि ।

अर्थ- ऐसी (पूर्वोक्त) भावना के होने पर व्यवहारनय का चारित्र होता है (अब). (मैं) इससे (इसके) बाद में निश्चयनय के चारित्र को कहूँगा ।

1. 'उड्ढं' अव्यय के साथ अपादान का प्रयोग होता है ।
   संस्कृत-हिन्दी कोशः वामन शिवराम आप्टे

नोटः 'एत्तो उड्ढं' का दूसरा अर्थ 'इससे उत्तम' भी लिया जा सकता है जो विचारणीय है। **(संपादक)**

मूल पाठ

1. णमिऊण जिणं वीरं अणंतवरणाणदंसणसहावं ।
वोच्छामि णियमसारं केवलिसुदकेवलीभणिदं ।।

2. मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं ।
मग्गो मोक्खउवाओ तस्स फलं होइ णिव्वाणं ।।

3. णियमेण य जं कज्जं तं णियमं णाणदंसणचरित्तं ।
विवरीयपरिहरत्थं भणिदं खलु सारमिदि वयणं ।।

4. णियमं मोक्खउवाओ तस्स फलं हवदि परमणिव्वाणं ।
एदेसिं तिण्हं पि य पत्तेयपरूवणा होइ ।।

5. अत्तागमतच्चाणं सद्दहणादो हवेइ सम्मत्तं ।
ववगयअसेसदोसो सयलगुणप्पा हवे अत्तो ।।

6. छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता जरा रुजा मिच्चू ।
सेदं खेद मदो रइ विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो ।।

7. णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो ।
सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ ण परमप्पा ।।

8. तस्स मुहुग्गदवयणं पुव्वावरदोसविरहियं सुद्धं।
आगममिदि परिकहियं तेण दु कहिया हवंति तच्चत्था।।

9. जीवा पोग्गलकाया धम्माधम्मा य काल आयासं।
तच्चत्था इदि भणिदा णाणागुणपज्जएहि संजुत्ता ।।

10. जीवो उवओगमओ उवओगो णाणदंसणो होइ।
णाणुवओगो दुविहो सहावणाणं विहावणाणं ति ।।

11. केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावणाणं ति।
सण्णाणिदरवियप्पे विहावणाणं हवे दुविहं ।।

12. सण्णाणं चउभेयं मदिसुदओही तहेव मणपज्जं।
अण्णाणं तिवियप्पं मदियाई भेददो चेव ।।

13. तह दंसणउवओगो ससहावेदरवियप्पदो दुविहो।
केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावमिदि भणिदं ।।

14. चक्खु अचक्खू ओही तिण्णि वि भणिदं विहावदिट्ठि त्ति।
पज्जाओ दुवियप्पो सपरावेक्खो य णिरवेक्खो ।।

15. णरणारयतिरियसुरा पज्जाया ते विहावमिदि भणिदा।
कम्मोपाधिविवज्जियपज्जाया ते सहावमिदि भणिदा ।।

16. माणुस्सा दुवियप्पा कम्ममहीभोगभूमिसंजादा ।
सत्तविहा णेरइया णादव्वा पुढविभेदेण ॥

17. चउदहभेदा भणिदा तेरिच्छा सुरगणा चउब्भेदा ।
एदेसिं वित्थारं लोयविभागेसु णादव्वं ॥

18. कत्ता भोत्ता आदा पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारा ।
कम्मजभावेणादा कत्ता भोत्ता दु णिच्छयदो ॥

19. दव्वत्थिएण जीवा वदिरित्ता पुव्वभणिदपज्जाया ।
पज्जयणएण जीवा संजुत्ता होंति दुविहेहिं ॥

20. अणुखंधवियप्पेण दु पोग्गलदव्वं हवेदि दुवियप्पं ।
खंधा हु छप्पयारा परमाणू चेव दुवियप्पो ॥

21. अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं च सुहुमथूलं च ।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं ॥

22. भूपव्वदमादीया भणिदा अइथूलथूलमिदि खंधा ।
थूला इदि विण्णेया सप्पीजलतेल्लमादीया ॥

23. छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि वियाणाहि ।
सुहुमथूलेदि भणिया खंधा चउरक्खविसया य ॥

24. सुहुमा हवंति खंधा पाओग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो।
तव्विवरीया खंधा अइसुहुमा इदि परूवेंति ॥

25. धाउचउक्कस्स पुणो जं हेऊ कारणं ति तं णेयो।
खंधाणं अवसाणं णादव्वो कज्जपरमाणु ॥

26. अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं णेव इंदियग्गेज्झं।
अविभागी जं दव्वं परमाणू तं वियाणाहि ॥

27. एयरसरूवगंधं दोफासं तं हवे सहावगुणं।
विहावगुणमिदि भणिदं जिणसमये सव्वपयडत्तं ॥

28. अण्णणिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ।
खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जाओ ॥

29. पोग्गलदव्वं उच्चइ परमाणू णिच्छएण इदरेण।
पोग्गलदव्वो त्ति पुणो ववदेसो होदि खंधस्स ॥

30. गमणणिमित्तं धम्ममधम्मं ठिदि जीवपोग्गलाणं च।
अवगहणं आयासं जीवादीसव्वदव्वाणं ॥

31. समयावलिभेदेण दु दुवियप्पं अहव होइ तिवियप्पं।
तीदो संखेज्जावलिहदसंठाणप्पमाणं तु ॥

32. जीवादु पोग्गलादो णंतगुणा चावि संपदा समया।
लोयायासे संति य परमट्ठो सो हवे कालो॥

33. जीवादीदव्वाणं परिवट्टणकारणं हवे कालो।
धम्मादिचउण्हं णं सहावगुणपज्जया होंति॥

34. एदे छद्दव्वाणि य कालं मोत्तूण अत्थिकाय त्ति।
णिद्दिट्ठा जिणसमये काया हु बहुप्पदेसत्तं॥

35. संखेज्जासंखेज्जाणंतपदेसा हवंति मुत्तस्स।
धम्माधम्मस्स पुणो जीवस्स असंखदेसा हु॥

36. लोयायासे तावं इदरस्स अणंतयं हवे देसा।
कालस्स ण कायत्तं एयपदेसो हवे जम्हा॥

37. पोग्गलदव्वं मुत्तं मुत्तिविरहिया हवंति सेसाणि।
चेदणभावो जीवो चेदणगुणवज्जिया सेसा॥

38. जीवादिबहित्तच्चं हेयमुवादेयमप्पणो अप्पा।
कम्मोपाधिसमुब्भवगुणपज्जाएहिं वदिरित्तो॥

39. णो खलु सहावठाणा णो माणवमाणभावठाणा वा।
णो हरिसभावठाणा णो जीवस्साहरिस्सठाणा वा॥

40. णो ठिदिबंधट्ठाणा पयडिट्ठाणा पदेसठाणा वा।
णो अणुभागट्ठाणा जीवस्स ण उदयठाणा वा॥

41. णो खइयभावठाणा णो खयउवसमसहावठाणा वा।
ओदइयभावठाणा णो उवसमणे सहावठाणा वा॥

42. चउगइभवसंभमणं जाइजरामरणरोगसोगा य।
कुलजोणिजीवमग्गणठाणा जीवस्स णो संति॥

43. णिद्दंडो णिद्दंद्दो णिम्ममो णिक्कलो णिरालंबो।
णीरागो णिद्दोसो णिम्मूढो णिब्भयो अप्पा॥

44. णिग्गंथो णीरागो णिस्सल्लो सयलदोसणिम्मुक्को।
णिक्कामो णिक्कोहो णिम्माणो णिम्मदो अप्पा॥

45. वण्णरसगंधफासा थीपुंसणउंसयादिपज्जाया।
संठाणा संहणणा सव्वे जीवस्स णो संति॥

46. अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं॥

47. जारिसिया सिद्धप्पा भवमल्लिय जीव तारिसा होंति।
जरमरणजम्ममुक्का अट्ठगुणालंकिया जेण॥

48. असरीरा अविणासा अणिंदिया णिम्मला विसुद्धप्पा।
जह लोयग्गे सिद्धा तह जीवा संसिदी णेया॥

49. एदे सव्वे भावा ववहारणयं पडुच्च भणिदा हु।
सव्वे सिद्धसहावा सुद्धणया संसिदी जीवा॥

50. पुव्वुत्तसयलभावा परदव्वं परसहावमिदि हेयं।
सगदव्वमुवादेयं अंतरतच्चं हवे अप्पा॥

51. विवरीयाभिणिवेसविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं।
संसयविमोहविब्भमविवज्जियं होदि सण्णाणं॥

52. चलमलिणमगाढत्तविवज्जियसद्दहणमेव सम्मत्तं।
अधिगमभावो णाणं हेयोवादेयतच्चाणं॥

53. सम्मत्तस्स णिमित्तं जिणसुत्तं तस्स जाणया पुरिसा।
अंतरहेऊ भणिदा दंसणमोहस्स खयपहुदी॥

54. सम्मत्तं सण्णाणं विज्जदि मोक्खस्स होदि सुण चरणं।
ववहारणिच्छएण दु तम्हा चरणं पवक्खामि॥

55. ववहारणयचरित्ते ववहारणयस्स होदि तवचरणं।
णिच्छयणयचारित्ते तवचरणं होदि णिच्छयदो॥

56. कुलजोणिजीवमग्गणठाणाइसु जाणिऊण जीवाणं ।
तस्सारंभणियत्तणपरिणामो होइ पढमवदं ॥

57. रागेण व दोसेण व मोहेण व मोसभासपरिणामं ।
जो पजहदि साहु सया विदियवदं होइ तस्सेव ॥

58. गामे वा णयरे वाऽरण्णे वा पेच्छिऊण परमत्थं ।
जो मुयदि गहणभावं तिदियवदं होदि तस्सेव ॥

59. दट्ठूण इत्थिरूवं वांछाभावं णियत्तदे तासु ।
मेहुणसण्णविवज्जियपरिणामो अहव तुरीयवदं ॥

60. सव्वेसिं गंथाणं चागो णिरवेक्खभावणापुव्वं ।
पंचमवदमिदि भणिदं चारित्तभरं वहंतस्स ॥

61. पासुगमग्गेण दिवा अवलोगंतो जुगप्पमाणं हि ।
गच्छइ पुरदो समणो इरियासमिदी हवे तस्स ॥

62. पेसुण्णहासकक्कसपरणिंदप्पप्पसंसियं वयणं ।
परिचत्ता सपरहिदं भासासमिदी वदंतस्स ॥

63. कदकारिदाणुमोदणरहिदं तह पासुगं पसत्थं च ।
दिण्णं परेण भत्तं समभुत्ती एसणासमिदी ॥

64. पोत्थइकमंडलाइं गहणविसग्गेसु पयतपरिणामो ।
आदावणणिक्खेवणसमिदी होदि त्ति णिद्दिट्ठा ॥

65. पासुगभूमिपदेसे गूढे रहिए परोपरोहेण ।
उच्चारादिच्चागो पइट्ठासमिदी हवे तस्स ॥

66. कालुस्समोहसण्णारागद्दोसाइअसुहभावाणं ।
परिहारो मणुगुत्ती ववहारणयेण परिकहियं ॥

67. थीराजचोरभत्तकहादिवयणस्स पावहेउस्स ।
परिहारो वयगुत्ती अलियादिणियत्तिवयणं वा ॥

68. बंधणछेदणमारणआकुंचण तह पसारणादीया ।
कायकिरियाणियत्ती णिद्दिट्ठा कायगुत्ति त्ति ॥

69. जा रायादिणियत्ती मणस्स जाणीहि तं मणोगुत्ती ।
अलियादिणियत्तिं वा मोणं वा होइ वइगुत्ती ॥

70. कायकिरियाणियत्ती काउस्सग्गो सरीरगे गुत्ती ।
हिंसाइणियत्ती वा सरीरगुत्ति त्ति णिद्दिट्ठा ॥

71. घणघाइकम्मरहिया केवलणाणाइपरमगुणसहिया ।
चोत्तिसअदिसयजुत्ता अरिहंता एरिसा होंति ॥

72. णट्ठट्ठकम्मबंधा अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा ।
लोयग्गठिदा णिच्चा सिद्धा ते एरिसा होंति ।।

73. पंचाचारसमग्गा पंचिंदियदंतिदप्पणिद्दलणा ।
धीरा गुणगंभीरा आयरिया एरिसा होंति ।।

74. रयणत्तयसंजुत्ता जिणकहियपयत्थदेसया सूरा ।
णिक्कंखभावसहिया उवज्झाया एरिसा होंति ।।

75. वावारविप्पमुक्का चउव्विहाराहणासयारत्ता ।
णिग्गंथा णिम्मोहा साहू दे एरिसा होंति ।।

76. एरिसयभावणाए ववहारणयस्स होदि चारित्तं ।
णिच्छयणयस्स चरणं एत्तो उड्ढं पवक्खामि ।।

परिशिष्ट-1

संज्ञा-कोश

संज्ञा शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अंत	अन्त	अकारान्त पु.	26
अंतर	अन्तर	अकारान्त पु.	50
अक्ख	इन्द्रिय	अकारान्त नपुं.	23
अगाढत्त	अदृढ़ता	अकारान्त नपुं.	52
अचक्खु	अचक्षु	*उकारान्त* पु., नपुं.	14
अणु	परमाणु	*उकारान्त* पु.	20
अणुभाग	अनुभाग बंध	अकारान्त पु.	40
अणुमोदण	अनुमोदना	अकारान्त नपुं.	63
अण्णाण	अज्ञान	अकारान्त नपुं.	12
अत्थ	वस्तु	अकारान्त पु., नपुं.	58
अधम्म	अधर्म	अकारान्त पु.	9, 30, 35
अधिगमभाव	ठीक-ठीक बोध होना	अकारान्त पु.	71
अप्प	निज	अकारान्त पु.	38
	आत्मा	अकारान्त पु.	38, 43, 44, 50
	अपनी	अकारान्त पु.	62
अभिणिवेस	अभिप्राय	अकारान्त पु.	51
अरिहंत	अरहंत	अकारान्त पु.	71
अलिय	असत्य	अकारान्त नपुं.	67, 69

अवगहण	अवगाहन	अकारान्त नपुं.	30
अवमाण	अपमान	अकारान्त पु.	39
अवसाण	अंतिम भाग	अकारान्त नपुं.	25
असुह	अशुभ	अकारान्त नपुं.	66
अहरिस्स	खेद	अकारान्त पु.	39
आइ	आदि	**इकारान्त** पु.	7, 56, 64, 66,70
आकुंचण	संकोचन	अकारान्त नपुं.	68
आगम	आगम	अकारान्त पु.	5, 8
आचार	आचार	अकारान्त पु.	73
आतव	आतप	अकारान्त पु., नपुं.	23
आद	आत्मा	अकारान्त पु.	18
आदावण	आदान	अकारान्त नपुं.	64
आदि	आदि	**इकारान्त** पु.	21, 22, 23, 26, 30, 32, 33, 38, 45, 65, 67, 68, 69, 71
आयरिय	आचार्य	अकारान्त पु.	73
आयास	आकाश	अकारान्त पु., नपुं.	9, 30
आरंभ	हिंसा	अकारान्त पु.	56
आराहणा	आराधना	आकारान्त स्त्री.	75
आवलि	आवलि	**इकारान्त** स्त्री.	31
इंदिय	इन्द्रिय	अकारान्त पु., नपुं.	11, 13, 26, 73
इत्थी	स्त्री	**ईकारान्त** स्त्री.	59

इरिया	ईर्या	आकारान्त स्त्री.	61
उच्चार	मलोत्सर्ग	अकारान्त पु.	65
उदय	उदय	अकारान्त पु.	40
उपरोह	बाधा	अकारान्त पु.	65
उपाधि	संयोग	**इकारान्त** पु., स्त्री.	15, 38
उवओग	उपयोग	अकारान्त पु.	10, 13
उवज्झाय	उपाध्याय	अकारान्त पु.	74
उवसम	उपशम	अकारान्त पु.	41
उवसमण	उपशम	अकारान्त पु., नपुं.	41
उवाअ	उपाय	अकारान्त पु.	2, 4
उव्वेग	अरति	अकारान्त पु.	6
एसणा	एषणा	आकारान्त स्त्री.	63
ओदइय	उदय से उत्पन्न	अकारान्त पु., नपुं.	41
ओहि	अवधि	**इकारान्त** पु., स्त्री.	12, 14
कज्ज	कार्य	अकारान्त नपुं.	25
कमंडल	कमंडल	अकारान्त पु., नपुं.	64
कम्म	कर्म	अकारान्त पु., नपुं.	15,18,24,38, 71
कम्ममही	कर्मभूमि	**ईकारान्त** स्त्री.	16
कम्मबंध	कर्मबंध	अकारान्त पु.	72
कहा	कथा	आकारान्त स्त्री.	67
काउस्सग	कायोत्सर्ग	अकारान्त पु.	70
काय	काय	अकारान्त पु.	9, 34, 68, 70
	शरीर		68

कायत्त	कायत्व	अकारान्त नपुं.	36
कारण	आधार	अकारान्त नपुं.	25
	कारण		33
काल	काल	अकारान्त पु.	9, 32, 33, 34, 36
कालुस्स	कलुषता	अकारान्त नपुं.	66
किरिया	क्रिया	आकारान्त स्त्री.	68, 70
कुल	वंश	अकारान्त पु., नपुं.	42
	कुल		56
केवल	केवलज्ञान	अकारान्त नपुं.	11
	केवलदर्शन	अकारान्त नपुं.	13
केवलणाण	केवलज्ञान	अकारान्त नपुं.	7, 71
केवलि	केवली	अकारान्त पु.	1
खंध	स्कंध	अकारान्त नपुं.	20, 22, 23, 24, 25, 28, 29
खइय	क्षय	अकारान्त पु.	41
खय	क्षय	अकारान्त पु.	41, 53
खेद	खेद	अकारान्त पु.	6
गंथ	परिग्रह	अकारान्त पु.	60
गंध	गंध	अकारान्त पु.	27, 45
गइ	गति	**इकारान्त** स्त्री.	42
गमण	गति	अकारान्त नपुं.	30
गहण	ले लेना	अकारान्त नपुं.	58, 64

गाम	गाँव	अकारान्त पु.	58
गुण	गुण	अकारान्त पु., नपुं.	9, 27, 33, 37, 38, 46, 47, 71, 73
	पर्याय		27
गुत्ति	गुप्ति	इकारान्त स्त्री.	67, 68
	संयम		70
घाइकम्म	घातिया कर्म	अकारान्त नपुं.	71
चक्खु	चक्षु	उकारान्त पु., नपुं.	14
चरण	सम्यक्चारित्र	अकारान्त नपुं.	54
	आचरण		55
	चारित्र		76
चरित्त	सम्यक्चारित्र	अकारान्त नपुं.	3
	चारित्र		55
चल	क्षोभ	अकारान्त पु.	52
चाग	त्याग	अकारान्त पु.	60
चारित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	55, 60, 76
चिंता	चिंता	आकारान्त स्त्री.	6
चेदण	चेतन	अकारान्त पु.	37
	चेतना		37, 47
चेदणा	चेतना	अकारान्त स्त्री.	46
चोर	चोर	अकारान्त पु.	67
च्चाग	त्याग	अकारान्त पु.	65
छाया	छाया	आकारान्त स्त्री.	23

छुहा	क्षुधा	आकारान्त स्त्री.	6
छेदण	छेदन	अकारान्त नपुं.	68
जण	जन्म	अकारान्त पु.	6
जम्म	जन्म	अकारान्त पु., नपुं.	47
जरा	बुढ़ापा	आकारान्त स्त्री.	6, 42
	जरा	आकारान्त स्त्री.	47
जल	जल	अकारान्त नपुं.	22
जाइ	जन्म	इकारान्त स्त्री.	42
जिण	तीर्थंकर	अकारान्त पु.	1
	जिनेन्द्र भगवान		2
	जिन		27
	जिनेन्द्र देव		74
जिणसमय	जिनशासन	अकारान्त पु.	34
जिनसुत्त	जिनसूत्र	अकारान्त नपुं.	53
जीव	जीव	अकारान्त पु., नपुं.	9, 10, 19, 30, 32, 35, 37, 38, 39, 40, 42, 45, 46, 47, 48, 49, 56
	जीवस्थान	अकारान्त पु., नपुं.	42, 56
जुग	चार हाथ	अकारान्त नपुं.	61
जोणि	उत्पत्ति स्थान	इकारान्त स्त्री.	42
	योनि		56
ट्ठाण	भावदशा		40
	अवस्था		40

ठाण	दशा	अकारान्त पु., नपुं.	39, 41
	पर्याय		39
	स्थिति/अवसर	अकारान्त पु., नपुं	40
	कारण		40
	स्थान		42, 56
ठिदि	ठहरना	इकारान्त स्त्री.	30
	स्थिति		40
णउंसय	नपुंसक	अकारान्त पु., नपुं.	45
णयर	नगर	अकारान्त नपुं.	58
णर	मनुष्य	अकारान्त पु.	15
णाण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	1, 10, 11
	सम्यग्ज्ञान		3, 52
णारय	नारकी	अकारान्त पु.	15
णिंदा	निंदा	आकारान्त स्त्री.	62
णिक्खेवण	निक्षेपण	अकारान्त नपुं.	64
णिच्छय	निश्चयनय	अकारान्त पु.	18, 29, 55
	निश्चय		54
णिच्छयणय	निश्यचयनय	अकारान्त पु.	55, 76
णिद्दा	निद्रा	आकारान्त स्त्री.	6
णिमित्त	निमित्त	अकारान्त नपुं.	30, 53
णियत्तण	त्यागना	अकारान्त नपुं.	56
णियत्ति	त्याग	इकारान्त स्त्री.	67, 68, 69, 70
णियम	नियम	अकारान्त पु.	3, 4

णियमसार	नियमसार	अकारान्त पु.	1
णिव्वाण	निर्वाण	अकारान्त नपुं.	2, 4
णेरइय	नारकी	अकारान्त पु.	16
तच्च	सार	अकारान्त नपुं.	5
	द्रव्य		50
	तत्त्व		52
तच्चत्थ	तत्त्वार्थ	अकारान्त पु.	8, 9
तण्हा	तृष्णा	आकारान्त स्त्री.	6
तव	तप	अकारान्त पु., नपुं.	55
तिरिय	तिर्यंच	अकारान्त पु.	15
तेरिच्छ	तिर्यंच	अकारान्त पु.	17
तेल	तेल	अकारान्त नपुं.	22
थी	स्त्री	**ईकारान्त** स्त्री.	45, 67
दंति	हाथी	**इकारान्त** पु.	73
दंसण	दर्शन	अकारान्त पु., नपुं.	1, 10, 13, 53
	सम्यग्दर्शन		3
दप्प	मद	अकारान्त पु.	73
दव्व	द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	20, 26, 29, 30, 33, 34, 37
दव्वत्थिअ	द्रव्यार्थिक नय	अकारान्त पु.	19
दिट्ठि	दर्शन	**इकारान्त** स्त्री.	14
देस	प्रदेश	अकारान्त पु.	35, 36
दोस	दोष	अकारान्त पु.	5, 7, 8, 44
	द्वेष		57

दोस	द्वेष	अकारान्त पु.	66
धम्म	धर्म	अकारान्त पु., नपुं.	9, 30, 33, 35
धरा	पृथ्वी	आकारान्त स्त्री.	21
धाउ	धातु	*उकारान्त* पु.	25
पइट्ठा	प्रतिष्ठापन	आकारान्त स्त्री.	65
पज्जअ	पर्याय	अकारान्त पु.	9
पज्जय	पर्याय	अकारान्त पु.	33
पज्जयणअ	पर्यायार्थिक नय	अकारान्त पु.	19
पज्जाअ	पर्याय	अकारान्त पु.	14, 28, 38
पज्जाय	पर्याय	अकारान्त पु.	15, 19, 45
पदेस	प्रदेश	अकारान्त पु.	35, 36, 40, 65
पयडत्त	प्रकटता	अकारान्त नपुं.	27
पयडि	प्रकृति	**इकारान्त** स्त्री.	40
पयत्थ	पदार्थ	अकारान्त पु.	74
परदव्व	परद्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	50
परमप्प	तीर्थंकर	अकारान्त पु.	7
परमाणु	परमाणु	*उकारान्त* पु.	20, 25, 26, 29
परसहाव	परस्वभाव	अकारान्त पु.	50
परिणाम	परिणमन	अकारान्त पु.	28
	भाव		56, 57, 59, 64
परिवट्टण	परिणमन	अकारान्त नपुं.	33
परिहार	परिहार	अकारान्त पु.	66
	त्याग		67

परूवणा	प्रतिपादन	आकारान्त स्त्री.	4
पव्वद	पर्वत	अकारान्त पु., नपुं.	22
पसारण	प्रसारण	अकारान्त नपुं.	68
पाव	पाप	अकारान्त पु., नपुं.	67
पुंस	पुरुष	अकारान्त पु.	45
पुढवि	पृथ्वी	इकारान्त स्त्री.	16
पुरिस	मनुष्य	अकारान्त पु., नपुं.	53
पुव्व	पूर्व	अकारान्त पु., नपुं.	50
पेसुण्ण	पैशुन्य (चुगली)	अकारान्त नपुं.	62
पोग्गल	पुद्गल	अकारान्त पु., नपुं.	9, 18, 20, 29, 30, 32, 37
पोत्थइ	पुस्तक	*इकारान्त* पु., नपुं.	64
प्पदेसत्त	प्रदेशता	अकारान्त नपुं.	34
प्पमाण	प्रमाण	अकारान्त नपुं.	31
	परिमाण		61
फल	फल	अकारान्त पु., नपुं.	2, 4
फास	स्पर्श	अकारान्त पु., नपुं.	27, 45
बंध	बंध	अकारान्त पु.	40
बंधण	बंधन	अकारान्त नपुं.	68
ब्भेद	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	17
ब्भेय	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	21
बहितच्च	बाह्य/पर द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	38

भत्त	आहार	अकारान्त पु., नपुं.	63
	भोजन		67
भर	अतिशय	अकारान्त पु., नपुं.	60
भव	संसार	अकारान्त पु.	42, 47
भाव	भाव	अकारान्त पु.	18,39,41,49,50, 58, 59, 66, 74
	स्वभाव		37
भावणा	चिंतन	आकारान्त स्त्री.	60
	भावना		76
भासा	भाषा	आकारान्त स्त्री.	57, 62
भुत्ति	आहार	इकारान्त स्त्री.	63
भू	भूमि	उकारान्त स्त्री.	22
भूमि	भूमि	इकारान्त स्त्री.	65
भेद	भेद	अकारान्त पु., नपुं.	12, 16, 17, 31
भेय	प्रकार	अकारान्त पु.	12
भोगभूमि	भोगभूमि	इकारान्त स्त्री.	16
मग्ग	मार्ग	अकारान्त पु.	2, 61
मग्गण	मार्गणा	अकारान्त पु., स्त्री.	42, 56
मज्झ	मध्य	अकारान्त नपुं.	26
मण	मन	अकारान्त पु., नपुं.	69
मणुगुत्ति	मनोगुप्ति	इकारान्त स्त्री.	66
मणोगुत्ति	मनोगुप्ति	इकारान्त स्त्री.	69
मणपज्ज	मनःपर्यय	अकारान्त पु.	12

मद	मद	अकारान्त पु., नपुं.	6
मदि	मति	**इकारान्त** स्त्री.	12
मरण	मृत्यु	अकारान्त पु.	42
	मरण		47
मलिण	दोष	अकारान्त नपुं.	52
माण	मान	अकारान्त पु., नपुं.	39
माणुस्स	मनुष्य	अकारान्त पु., नपुं.	16
मारण	मारन	अकारान्त नपुं.	68
मिच्चु	मृत्यु	*उकारान्त* पु.	6
मुह	मुख	अकारान्त नपुं.	8
मेहुण	मैथुन	अकारान्त नपुं.	59
मोक्ख	मोक्ष	अकारान्त पु.	2, 4, 54
मोण	वाणी का संयम	अकारान्त नपुं.	69
मोस	असत्य	अकारान्त पु., नपुं.	57
मोह	मोह	अकारान्त पु.	6, 53, 57, 66
याइ	आदि	**इकारान्त** पु.	12
रइ	रति	**इकारान्त** स्त्री.	6
रण्ण	वन	अकारान्त नपुं.	58
रयणत्तय	रत्नत्रय	अकारान्त नपुं.	74
रस	रस	अकारान्त पु., नपुं.	27, 45
राग	राग	अकारान्त पु.	6, 57, 66
राज	राज	अकारान्त पु.	67
राय	राग	अकारान्त पु.	69

रुजा	रोग	आकारान्त स्त्री.	6
रूव	रूप	अकारान्त पु., नपुं.	27, 59
रोग	व्याधि	अकारान्त पु.	42
रोस	रोष	अकारान्त पु.	6
लोय	लोक	अकारान्त पु.	17
लोयग्ग	लोक का अग्रभाग	अकारान्त नपुं.	48, 72
लोयायास	लोकाकाश	अकारान्त पु., नपुं.	32, 36
वइगुत्ति	वचनगुप्ति	इकारान्त स्त्री.	69
वण्ण	वर्ण	अकारान्त पु.	45
वद	व्रत	अकारान्त पु., नपुं.	56,57,58,59,60
वयगुत्ति	वचनगुप्ति	इकारान्त स्त्री.	67
वग्गणा	वर्गणा	आकारान्त स्त्री.	24
वयण	वचन	अकारान्त पु., नपुं.	3, 8, 62, 67
ववदेस	नाम	अकारान्त पु.	29
ववहार	व्यवहार	अकारान्त पु.	54
ववहार	व्यवहारनय	अकारान्त पु.	18
ववहारणय	व्यवहारनय	अकारान्त पु.	49, 55, 66, 76
वांछा	चाह	आकारान्त स्त्री.	59
वावार	व्यवसाय	अकारान्त पु.	75
वित्थार	विस्तार	अकारान्त पु.	17
विभव	वैभव	अकारान्त पु.	7
विभाग	विभाग	अकारान्त पु.	17
वियप्प	भेद	अकारान्त पु.	11, 20
	विकल्प		13

विसय	विषय	अकारान्त पु.	23
विहाव	विभाव	अकारान्त पु.	10, 11, 14, 15, 27, 28
विब्भम	विभ्रम	अकारान्त पु.	51
विसग्ग	छोड़ना	अकारान्त पु.	64
वीर	महावीर	अकारान्त पु.	1
संठाण	संस्थान	अकारान्त नपुं.	31
	संठाण		45
	आकार		46
संपदा	संपदा	आकारान्त स्त्री.	32
संभमण	परिभ्रमण	अकारान्त नपुं.	42
संसय	संशय	अकारान्त पु.	51
संसिदि	संसार चक्र	**इकारान्त** स्त्री.	48, 49
संहणण	संहनन	अकारान्त नपुं.	45
सगदव्व	स्वद्रव्य	अकारान्त पु., नपुं.	50
सण्णा	संज्ञा	आकारान्त स्त्री.	59, 66
सण्णाण	सीमित तथा निर्दोष ज्ञान	अकारान्त नपुं.	11
	सम्यग्ज्ञान	अकारान्त नपुं.	12, 51, 54
सद्दहण	श्रद्धान	अकारान्त नपुं.	5, 51, 52
सप्पि	घी	**इकारान्त** नपुं.	22
समण	श्रमण	अकारान्त पु.	61
समय	शासन	अकारान्त पु.	27
	समय		31

समिदि	समिति	इकारान्त स्त्री.	61,62,63,64,65
सम्मत्त	सम्यक्त्व	अकारान्त नपुं.	5, 51, 52, 53,54
सरीर	काय	अकारान्त पु., नपुं.	70
सरीरगुत्ति	कायगुप्ति	इकारान्त स्त्री.	70
सहाव	स्वभाव	अकारान्त पु.	1, 10, 11, 13, 15, 27, 28, 33, 39, 41, 49
सासण	शासन	अकारान्त नपुं.	2
साहु	साधु	उकारान्त पु.	57, 75
सिद्ध	सिद्ध	अकारान्त पु.	48, 72
सिद्धप्प	सिद्ध आत्मा	अकारान्त पु.	47
सुद	श्रुत	अकारान्त नपुं.	54
सुद्धणय	शुद्धनय	अकारान्त पु.	49
सुदकेवलि	श्रुतकेवली	इकारान्त पु.	1
सुर	देव	अकारान्त पु.	15
सुरगण	देवसमूह	अकारान्त पु.	17
सेद	पसीना	अकारान्त पु.	6
सोग	खेद	अकारान्त पु.	42
हरिस	हर्ष	अकारान्त पु.	39
हिंसा	हिंसा	आकारान्त स्त्री.	70
हेउ	कारण	उकारान्त पु.	25, 67
	निमित्त		53
हेय	व्यवहार	अकारान्त पु.	54

क्रिया-कोश

अकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
णियत्त	रुकना	59
विज्ज	होना	54
हव	होना	4, 5, 8, 11, 20, 24, 27, 33, 35, 36, 37, 61, 65
	है	32, 50
हो	होना	2, 18, 19, 21, 31, 33, 47, 51, 54, 55, 56,57, 58, 64, 71, 72, 73,74, 75, 76
	विद्यमान होना	4
	है	10, 29, 69

अनियमित क्रिया

संति	होना	32, 42, 45

क्रिया-कोश

सकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
गच्छ	गमन करना	61
जाण	जानना	46, 69
पजह	छोड़ना	57
परूव	कहना	24
पवक्ख	कहना	54, 76
मुय	छोड़ना	58
वियाण	जानना	23, 26
वोच्छ	कहना	1
सुण	सुनना	54

अनियमित कर्मवाच्य

उच्चइ 3/1	कहा जाता है	7, 29

कृदन्त-कोश

संबंधक कृदन्त

कृदन्त शब्द	अर्थ	कृदन्त	गा.सं.
जाणिऊण	जानकर	संकृ	56
णमिऊण	नमस्कार करके	संकृ	1
पडुच्च	आश्रय करके	संकृ अनि	49
पेच्छिऊण	देखकर	संकृ	58
मोत्तूण	छोड़कर	संकृ अनि	34
दट्ठूण	देखकर	संकृ अनि	59
परिचत्ता	छोड़कर	संकृ अनि	62

भूतकालिक कृदन्त

अणिद्दिट्ठ	न कहा हुआ	भूकृ अनि	46
अलंकिय	विभूषित	भूकृ अनि	47
अल्लिय	प्रवेश किया हुआ	भूकृ	47
उग्गद	निकला हुआ	भूकृ अनि	8
उत्त	कथित	भूकृ अनि	50
कद	कृत	भूकृ अनि	63
कारिद	कारित	भूकृ	63
कहिय	कहा गया	भूकृ	8, 74
जुद	युक्त	भूकृ अनि	7
ठिद	स्थित	भूकृ अनि	72

णट्ठ	नष्ट कर दिया गया	भूकृ अनि	72
णिद्दिट्ठ	कहा गया	भूकृ अनि	34, 64, 68, 70
णिम्मुक्क	रहित	भूकृ अनि	44
दिण्ण	दिया हुआ	भूकृ अनि	63
परिकहिय	कहा गया	भूकृ	66
प्पसंसिय	प्रशंसा किया गया	भूकृ	62
भणिद	प्रतिपादित	भूकृ	1
	कहा गया	भूकृ	3, 9, 13, 14, 15, 17, 19, 22, 27, 49, 53, 60
भणिय	कहा गया	भूकृ	23
मुक्क	मुक्त	भूकृ अनि	47
रत्त	लगा हुआ	भूकृ अनि	75
रहिअ	रहित	भूकृ अनि	7
रहिद	के बिना	भूकृ अनि	63
वदिरित्त	रहित	भूकृ अनि	19
ववगय	नष्ट कर दिया गया	भूकृ अनि	5
विप्पमुक्क	छुटकारा पाया हुआ	भूकृ अनि	75
संजाद	उत्पन्न	भूकृ अनि	16

संजुत्त	युक्त	भूकृ अनि	9
	संयुक्त		19
समक्खाद	कहा गया	भूकृ अनि	2
समण्णिय	समन्वित/युक्त	भूकृ अनि	72
हिद	हितकारी	भूकृ अनि	62

विधि कृदन्त

कज्ज	पालन किया जाना चाहिये	विधिकृ अनि	3
गेज्झ	ग्रहण करने योग्य	विधिकृ अनि	26
णादव्व	समझा जाना चाहिये	विधिकृ	16, 17
	ज्ञातव्य		25
णेय	समझा जाना चाहिये	विधिकृ अनि	25, 48
विण्णेय	समझा जाना चाहिये	विधिकृ अनि	22

वर्तमान कृदन्त

अवलोगंत	देखता हुआ	वकृ	61
वदंत	बोलता हुआ	वकृ	62
वहंत	धारण करता हुआ	वकृ	60

विशेषण-कोश

शब्द	अर्थ	गा.सं.
अंतर	अंतरंग	53
अगंध	गंधरहित	46
अणंत	अनन्त	1, 35, 36
अणिंदिय	अतीन्द्रिय	48
अण्ण	पर	28
अत्त	आप्त	5
अत्थिकाय	अस्तिकाय	34
अदिसय	अतिशय	71
अधिगम	ठीक-ठीक बोध होना	52
अरस	रसरहित	46
अरूव	रूपरहित	46
अलिंगग्गहण	तर्क से ग्रहण न होनेवाला	46
अविणास	अविनाशी	48
अव्वत्त	अप्रकट	46
असंख	असंख्यात	35
असंखेज्ज	असंख्यात	35
असद्द	शब्दरहित	46
असरीर	अशरीरी	48
असहाय	सहायता निरपेक्ष	11
	असहाय	13

असेस	समस्त	5
इदर	भिन्न	11, 23, 29, 36
	विरोधी	13
उड्ड	उत्तम	76
उवओगमय	उपयोगमय	10
उवादेय	उपादेय	38, 50, 52
एरिस	ऐसा	71, 72, 73, 74, 75, 76
ओदइय	उदय से उत्पन्न	41
कक्कस	कटुवचन	62
कत्तु	कर्ता	18
कम्मज	कर्म से उत्पन्न	18
गंभीर	गंभीर	73
गुणप्प	गुणयुक्त	5
गूढ	प्रच्छन्न	65
घण	प्रगाढ़	71
जाणय	समझनेवाले	53
जारिस	जिस तरह से	47
जुत्त	सहित	71
णंतगुण	अनन्त गुण	32
णाणा	नाना प्रकार	9
णिक्कल	शरीररहित	43
णिक्काम	वासनारहित	44
णिक्कोह	क्रोधरहित	44
णिक्खंक	इच्छारहित	74

णिग्गंथ	परिग्रहरहित	44
	निर्ग्रंथ	75
णिच्च	शाश्वत	72
णिद्दंड	मन-वचन-काय के स्पंदनरहित	43
णिद्दंद	विरोधी विकल्परहित	43
णिद्दलण	मर्दन करनेवाले	73
णिद्दोस	दोष/द्वेषरहित	43
णिब्भय	भयरहित	43
णिम्मद	मदरहित	44
णिम्मम	पर से तादात्म्यरहित	43
णिम्मल	निर्मल	48
णिम्माण	अहंकाररहित	44
णिम्मूढ	अविवेक/मूर्च्छारहित	43
णिम्मोह	मोहरहित	75
णिरवेक्ख	अपेक्षारहित	14, 60
णिरालंब	पराश्रयरहित	43
णिरावेक्ख	अपेक्षारहित	28
णिस्सल्ल	शल्यरहित	44
णिस्सेस	समस्त	7
णीराग	रागरहित	43
	आसक्तिरहित	44
तारिस	उसी तरह से	47

ताव	उतने	36
तीद	भूतकाल	31
थूल	स्थूल	21, 22, 23
थूलथूल	स्थूलस्थूल	21, 22
थूलसुहुम	स्थूलसूक्ष्म	21
देसय	उपदेशक	74
धीर	धैर्यवान	73
पत्तेय	प्रत्येक	4
पयत्त	बड़ी सावधानी	64
पर	उत्कृष्ट	58
	पर	62, 65
	दूसरा	63
परम	परम	4, 7
	सर्वोत्तम	71
	सर्वोपरि	72
परमट्ठ	परमार्थ	32
पसत्थ	प्रशस्त	63
पहुदि	आदि	53
पाओग्ग	योग्य	24
पासुग	प्रासुक	61, 63, 65
पुव्व	पूर्व	19
	से युक्त	60
पुव्वावर	सब प्रकार	8

बहु	बहु	34
भीरु	भयभीत	6
भोत्तु	भोक्ता	18
मुत्त	मूर्त	35, 37
मुत्ति	मूर्ति	37
रहिअ	रहित	65
रहिय	रहित	11, 13, 71
वज्जिय	रहित	37
वर	श्रेष्ठ/उत्तम	1
वदिरित्त	रहित	38
विम्हिय	चकित	6
विमोह	विमोह	51
विरहिय	मुक्त	8
	रहित	37
विवज्जिय	रहित	15, 51, 52, 59
विवरीय	विपरीत	3
	अशुद्ध	51
विसुद्धप्प	विशुद्धात्मा	48
संखेज्ज	संख्यात	31, 35
संजुत्त	से युक्त	74
स-पर	स्व-पर	62
स-परावेक्ख	पर की अपेक्षा सहित	14
सम	समभाव	63

समग्ग	युक्त	73
समय	समयपर्याय	32
समुब्भव	उत्पन्न	38
सयल	समस्त	5, 44
	सभी	50
सरूव	स्वरूप	28
स-सहाव	स्वभावसहित	13
सहिय	से युक्त	71, 74
सार	पूर्ण रूप से सिद्ध	3
सिद्ध	सिद्ध	49
सुद्ध	शुद्ध	8
सुहुम	सूक्ष्म	21, 23, 24
सुहुमथूल	सूक्ष्मस्थूल	21
सेस	शेष	37
सूर	वीर	74
हद	गुणित	31
हास	मजाक/मखौल	62
हेय	हेय	38, 52
	त्यागने योग्य	50

अनियमित विशेषण

अविभागी 1/1	अविभागी	26
तव्विवरीओ 1/1	उसके विपरीत	7
तव्विवरीया 1/2	उसके विपरीत	24

संख्यावाची विशेषण

अट्ठ	आठ	47, 72
एय	एक	27, 36
चउ	चार	17, 33, 42
चउक्क	चार	25
चउदह	चौदह	17
चउभेय	चार प्रकार	12
चउर	चार	23
चउव्विह	चार प्रकार की	75
चोत्तिस	चौंतीस	71
छ	छ	34
छप्पयार	छ भेदवाला	20
छब्भेय	छ भेदरूप	21
ति	तीन	4, 14
तिदिय	तीसरा	58
तिवियप्प	तीन	12, 31
तुरिय	चौथा	59
दुविह	दो प्रकार का	2, 10, 11, 13
	दो प्रकार से	19
दुवियप्प	दो प्रकार का	14, 16, 20, 31
	दो भेदवाला	20
दो	दो	27
पंच	पाँच	73

पंचम	पाँचवा	60
पढम	पहला	56
विदिय	दूसरा	57
सत्तविह	सात प्रकार का	16

सर्वनाम-कोश

सर्वनाम शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अत्त	अपना	पु., नपुं.	26
एत	यह	पु., नपुं.	76
एद	यह	पु., नपुं.	4, 17, 34, 49
ज	जो	पु., नपुं.	3, 25, 26, 28, 57, 58
जा	जो	स्त्री.	69
त	वह	पु., नपुं.	2, 3, 4, 7, 8, 11, 13, 15,26, 27, 28, 32, 53, 56, 57, 58, 61, 65, 72
ता	वह	स्त्री.	59, 69
द	वह	पु., नपुं.	75
सव्व	प्रत्येक	पु., नपुं.	27
	सभी		30, 45, 49
	समस्त		60

अव्यय-कोश

अव्यय	*अर्थ*	*गा.सं.*
अइ	अति	21, 22, 24
अपि	इसके अतिरिक्त	4
अहव	अथवा	31, 59
इति	वाक्यालंकार	2
	शब्दस्वरूपद्योतक	10, 25, 34
	इसलिए	11
	समाप्तिसूचक	14
	पादपूरक	29, 64, 68, 70
इदि	क्योंकि	3
	अतः	8
	पादपूरक	9, 15, 60
	इसलिए	13, 50
	वाक्यार्थद्योतक	21
	शब्दस्वरूपद्योतक	22, 23
	इस प्रकार	24
	ही	27
उड्ढं	बाद में	76
एव	ही	51, 52, 57, 58
एत्तो	इससे	76
खलु	पादपूरक	3
	वाक्यालंकार	39
च	और	21, 30, 63

चावि	और	32
चेव	पादपूरक	12
	और	20
जम्हा	क्योंकि	36
जह	जिस प्रकार	48
जेण	चूँकि	47
णं	निश्चय ही	33
ण	नहीं	7, 36, 40
णियमेण	आवश्यक रूप से	3
णेव	नहीं	26
णो	नहीं	39, 40, 41, 42, 45
तं	ही	25
तम्हा	इसलिए	54
तह	उसी प्रकार	13, 48
	तथा	63, 68
तहेव	उसी प्रकार	12
ताव	उतने	36
तु	किन्तु	31
दिवा	दिन में	61
दु	ही	8
	और	18
	पादपूरक	20
	तो	31
	तथा	54

परि	निरर्थक प्रयोग	3, 8
पुणो	और	24, 28, 29
	फिर	25
	तथा	35
पुरदो	आगे	61
य	और	2, 4, 9, 14, 23, 32, 42
	पादपूरक	3, 34, 39
व	पुनरावृत्ति भाषा की पद्धति	57
	अथवा	57, 69, 70
	पादपूरक	11, 72
वा	और	39
	तथा	41
	भी	39, 40, 41, 67, 69
	अथवा	58, 69, 70
	पुनरावृत्ति भाषा की पद्धति	58
वि	निश्चय ही	18
	भी	22, 46, 68
	ही	14, 26, 52, 82
सया	सदा	57, 75
हरत्थं	हटानेवाला होने के कारण	3
हि	निश्चय ही	61
हु	निश्चय ही	20
	पादपूरक	34, 35

परिशिष्ट-2

छंद[1]

छंद के दो भेद माने गए हैं-

1. मात्रिक छंद 2. वर्णिक छंद

1. मात्रिक छंद- मात्राओं की संख्या पर आधारित छंदो को 'मात्रिक छंद' कहते हैं। इनमें छंद के प्रत्येक चरण की मात्राएँ निर्धारित रहती हैं। किसी वर्ण के उच्चारण में लगनेवाले समय के आधार पर दो प्रकार की मात्राएँ मानी गई हैं- ह्रस्व और दीर्घ। ह्रस्व (लघु) वर्ण की एक मात्रा और दीर्घ (गुरु) वर्ण की दो मात्राएँ गिनी जाती हैं-

लघु (ल) (।) (ह्रस्व)

गुरु (ग) (ऽ) (दीर्घ)

(1) संयुक्त वर्णों से पूर्व का वर्ण यदि लघु है तो वह दीर्घ/गुरु माना जाता है। जैसे- 'मुच्छिय' में 'च्छि' से पूर्व का 'मु' वर्ण गुरु माना जायेगा।

(2)जो वर्ण दीर्घस्वर से संयुक्त होगा वह दीर्घ/गुरु माना जायेगा। जैसे- रामे। यहाँ शब्द में 'रा'और 'मे' दीर्घ वर्ण है।

(3) अनुस्वार-युक्त ह्रस्व वर्ण भी दीर्घ/गुरु माने जाते हैं। जैसे- 'वंदिऊण' में 'व' ह्रस्व वर्ण है किन्तु इस पर अनुस्वार होने से यह गुरु (ऽ) माना जायेगा।

(4) चरण के अन्तवाला ह्रस्व वर्ण भी यदि आवश्यक हो तो दीर्घ/गुरु मान लिया जाता है और यदि गुरु मानने की आवश्यकता न हो तो वह ह्रस्व या गुरु जैसा भी हो बना रहेगा।

---

1. देखें, अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)

2. वर्णिक छंद- जिस प्रकार मात्रिक छंदों में मात्राओं की गिनती होती है उसी प्रकार वर्णिक छंदों में वर्णों की गणना की जाती है। वर्णों की गणना के लिए गणों का विधान महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक गण तीन मात्राओं का समूह होता है। गण आठ हैं जिन्हें नीचे मात्राओं सहित दर्शाया गया है-

यगण	-	। S S
मगण	-	S S S
तगण	-	S S ।
रगण	-	S । S
जगण	-	। S ।
भगण	-	S । S
नगण	-	। । ।
सगण	-	। । S

गाहा छंद-

गाहा छंद के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्राएँ, द्वितीय पाद में 18 तथा चतुर्थ पाद में 15 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण-

। । S । । S S S । S । । । S । S । । । S S

णमिऊण जिणं वीरं अणंतवरणाणदंसणसहावं।

S S । । । । S S S । । । । S । S । । S

वोच्छामि णियमसारं केवलिसुदकेवलीभणिदं॥

SS IIS S S SIIS S ISI S SS

अत्तागमतच्चाणं सद्दहणादो हवेइ सम्मत्तं।

III IIS IS S II I IS S IS S S

ववगयअसेसदोसो सयलगुणप्पा हवे अत्तो ॥

उग्गाहा छंद-

उग्गाहा छंद के प्रथम व तृतीय पाद में 12 मात्राएँ तथा द्वितीय व चतुर्थ पाद में 18 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण-

S I IS IIIIS S SI ISII II S S S

तस्स मुहुग्गदवयणं पुव्वावरदोसविरहियं सुद्धं।

S III IIIIIS SIIIIS ISI S S S

आगममिदि परिकहियं तेण दु कहिया हवंति तच्चत्था ॥

S IIS S S S IIS S S IS I S S S

अण्णणिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ।

S II S SI I S II S S S I S I S S S

खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जाओ ॥

गाथा संख्या	छंद	गाथा संख्या	छंद	गाथा संख्या	छंद
1.	गाहा	21.	गाहा	41.	उग्गाहा
2.	गाहा	22.	गाहा	42.	गाहा
3.	गाहा	23.	गाहा	43.	गाहा
4.	गाहा	24.	गाहा	44.	गाहा
5.	गाहा	25.	गाहा	45.	गाहा
6.	गाहा	26.	गाहा	46.	गाहा
7.	गाहा	27.	गाहा	47.	गाहा
8.	उग्गाहा	28.	उग्गाहा	48.	गाहा
9.	उग्गाहा	29.	गाहा	49.	गाहा
10.	उग्गाहा	30.	गाहा	50.	गाहा
11.	गाहा	31.	गाहा	51.	गाहा
12.	गाहा	32.	गाहा	52.	गाहा
13.	उग्गाहा	33.	गाहा	53.	गाहा
14.	गाहा	34.	गाहा	54.	गाहा
15.	उग्गाहा	35.	गाहा	55.	गाहा
16.	गाहा	36.	गाहा	56.	गाहा
17.	गाहा	37.	गाहा	57.	गाहा
18.	गाहा	38.	गाहा	58.	गाहा
19.	गाहा	39.	उग्गाहा	59.	गाहा
20.	गाहा	40.	गाहा	60.	गाहा

नोटः देखें नियमसार, कुन्दकुन्दभारती प्रकाशन, नई दिल्ली

गाथा संख्या	छंद
61.	गाहा
62.	गाहा
63.	गाहा
64.	गाहा
65.	गाहा
66.	गाहा
67.	गाहा
68.	गाहा
69.	गाहा
70.	गाहा
71.	गाहा
72.	गाहा
73.	गाहा
74.	गाहा
75.	गाहा
76.	गाहा

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1. नियमसार : हिन्दी अनुवादक-
स्व. पण्डित परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ
(सत्साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग, श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट, जयपुर, सप्तम संस्करण, 1993)

2. नियमसार : हिन्दी अनुवादक-श्री मगनलाल जैन
(श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र), 1965)

3. नियमसार : सम्पादक-श्री बलभद्र जैन
(कुन्दकुन्द भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 1987)

4. नियमसार : हिन्दी अनुवादक-
पूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी
(दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर (मेरठ) उत्तर प्रदेश, 1985)

5. नियमसार : प्रधान सम्पादक- प्रो. (डॉ.) लालचंद जैन
सम्पादन-अनुवाद -डॉ. ऋषभचन्द जैन 'फौजदार'
(प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान वैशाली, बासोकुण्ड, मुजफ्फरपुर, बिहार, 2002)

6. पाइय-सद्द-महण्णवो : पं. हरगोविन्ददास त्रिविक्रमचन्द्र सेठ
(प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी, 1986)

7. कुन्दकुन्द शब्दकोश : डॉ. उदयचन्द्र जैन
(श्री दिगम्बर जैन साहित्य-संस्कृति संरक्षण समिति, दिल्ली, 1989)

8. प्राकृत-हिन्दी शब्दकोश : डॉ. उदयचन्द्र जैन (न्यु भारतीय बुक कॉर्पोरेशन, दिल्ली, 2005)

9. संस्कृत-हिन्दी कोश : वामन शिवराम आप्टे (कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996)

10. हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण, भाग 1-2 : व्याख्याता श्री प्यारचन्द जी महाराज (श्री जैन दिवाकर-दिव्य ज्योति कार्यालय, मेवाड़ी बाजार, ब्यावर, 2006)

11. प्राकृत भाषाओं का व्याकरण : लेखक -डॉ. आर. पिशल
हिन्दी अनुवादक - डॉ. हेमचन्द्र जोशी (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1958)

12. प्राकृत रचना सौरभ : डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2003)

13. प्राकृत अभ्यास सौरभ : डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2004)

14. प्रौढ प्राकृत रचना सौरभ, भाग-1 : डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 1999)

15. अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार) : डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2008)

16. प्राकृत- हिन्दी-व्याकरण (भाग-1, 2) : लेखिका- श्रीमती शकुन्तला जैन
संपादक- डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2012, 2013)

17. प्राकृत-व्याकरण (संधि- समास- कारक-तद्धित-स्त्रीप्रत्यय-अव्यय) : डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2008)

◈◈◈